



गुरु प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती

ओ३म्

वैदिक संस्कृति का उद्घोषक

वैदिक सार्वदेशिक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली का साप्ताहिक मुख-पत्र

शुल्क :- एक प्रति 5 रुपया (भारत में) वार्षिक 250 रुपये तथा आजीवन 2500 रुपये

वर्ष 21 अंक 3

कुल पृष्ठ-8

14 से 20 मई, 2026

दयानन्दाब्द 202

सृष्टि सम्वत् 1960853127

सम्वत् 2083

ज्ये.कृ.-02

दयानन्द मठ चम्बा के संस्थापक एवं आर्य जगत् के तपोनिष्ठ संन्यासी स्वामी सुमेधानन्द जी के 89वें जन्मदिवस के उपलक्ष्य में आयोजित तीन दिवसीय समारोह भव्यता पूर्वक हुआ सम्पन्न

सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की

स्वामी वेद प्रकाश सरस्वती जी रहे यज्ञ के ब्रह्मा एवं आचार्य महावीर सिंह जी ने किया कार्यक्रम का संयोजन



हिमाचल प्रदेश की प्रसिद्ध संस्था रावी नदी के तट पर स्थित दयानन्द मठ, चम्बा के संस्थापक, आर्यसमाज के तपोनिष्ठ एवं वीतराग संन्यासी स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती के 89वें जन्मोत्सव के पावन अवसर पर 3 से 5 मई 2026 तक भव्य वैदिक समारोह का आयोजन अत्यन्त श्रद्धा, उत्साह एवं गरिमा के साथ सम्पन्न हुआ। इस त्रिदिवसीय समारोह में सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी की अध्यक्षता एवं स्वामी वेद प्रकाश सरस्वती जी के ब्रह्मत्व में यज्ञ का कार्यक्रम अत्यन्त श्रद्धा एवं भावना के साथ संचालित किया गया। पूरे कार्यक्रम का संयोजन दयानन्द मठ के अध्यक्ष एवं वैदिक विद्वान् आचार्य महावीर सिंह ने किया। कार्यक्रम में सर्वश्री स्वामी देवानन्द सरस्वती, स्वामी सोम्यानन्द, स्वामी महानन्द, स्वामी सत्यानन्द, स्वामी शांतानन्द, स्वामी आत्मानन्द, स्वामी व्रतानन्द, स्वामी संगीतानन्द, स्वामी चेतनानन्द आदि संन्यासियों एवं वानप्रस्थियों की गरिमायुगी उपस्थिति रही। इनके अतिरिक्त आर्य समाज के प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री मधुरम आर्य-अमृतसर भी कार्यक्रम में सम्मिलित रहे।

समारोह में प्रातःकाल 9 से 10 बजे तक वैदिक यज्ञ तथा 10 से 12.30 बजे तक प्रवचन एवं भजनों का कार्यक्रम चला। इसी प्रकार सायंकाल 4 से 5 बजे तक यज्ञ एवं 5 से 7 बजे तक भजन, सत्संग तथा प्रवचनों का क्रम निरन्तर चलता रहा। यज्ञ के ब्रह्मा पद को स्वामी वेद प्रकाश जी ने सुशोभित किया। मुख्य यजमान के रूप में आचार्य महावीर सिंह एवं श्रीमती सरस्वती आर्या, ध्रुव कुमार आर्य, श्री रमेश चन्द्र शास्त्री एवं श्रीमती नीतू आर्या आदि की विशेष भूमिका रही। सम्पूर्ण कार्यक्रम का कुशल संचालन आचार्य महावीर सिंह जी ने संभाला।

समारोह की व्यवस्थाओं में दयानन्द आदर्श उच्च माध्यमिक विद्यालय की अध्यापिकाओं, कार्यकर्ताओं एवं सेवाभावी आर्यजनों ने तन-मन से सहयोग प्रदान किया। सम्पूर्ण वातावरण वैदिक संस्कृति, अनुशासन एवं आध्यात्मिक चेतना से ओत-प्रोत रहा।

अपने ओजस्वी एवं प्रेरणादायी प्रवचनों में स्वामी आर्यवेश जी ने यज्ञ की महिमा का विस्तारपूर्वक वर्णन करते हुए कहा कि यज्ञ मानव



जीवन का मूलधार है। यज्ञ से वायु, जल एवं पर्यावरण की शुद्धि होती है तथा प्रकृति का संतुलन सुरक्षित रहता है। प्रत्येक आर्य परिवार को प्रतिदिन नित्यकर्मों से निवृत्त होकर अग्निहोत्र एवं यज्ञ अवश्य करना चाहिए। जिन परिवारों में नित्य यज्ञ होता है, वहाँ सद्भाव, शान्ति, समृद्धि एवं परोपकार की भावना स्वतः विकसित होती है। उन्होंने कहा कि पूज्य स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती जी का सम्पूर्ण जीवन यज्ञमय, तपमय एवं लोकहितकारी रहा। उन्होंने हिमाचल प्रदेश के दुर्गम पर्वतीय क्षेत्रों में वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज की विचारधारा का दीप प्रज्वलित किया और जन-जन को वैदिक संस्कृति से जोड़ने का महान कार्य किया। आज उसी तप, त्याग एवं समर्पण से स्थापित इस वैदिक केन्द्र का संचालन आचार्य महावीर सिंह जी अत्यन्त कुशलता एवं निष्ठा के साथ कर रहे हैं। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सरस्वती आर्या भी पूर्ण समर्पण भाव से इस पुण्यकार्य में सहभागी हैं।

स्वामी आर्यवेश जी ने आगे कहा कि स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती सार्वदेशिक सभा संचालन समिति के अध्यक्ष तथा वैदिक विरक्त मण्डल के संस्थापक अध्यक्ष भी रहे। सम्पूर्ण आर्यजगत् उन्हें अत्यन्त श्रद्धा एवं सम्मान की दृष्टि से देखता था। ऐसे तपोनिष्ठ, वीतराग एवं

निष्काम संन्यासी युगों में विरले ही उत्पन्न होते हैं।

इस त्रिदिवसीय समारोह में भजनोपदेश का कार्यक्रम भी अत्यन्त प्रभावशाली एवं भावविभोर करने वाला रहा। विशेष रूप से श्री मधुरम आर्य, सुनील कुमार शास्त्री, मनोज कुमार शास्त्री, संजय शास्त्री एवं श्रीमती नीतू आर्या द्वारा प्रस्तुत भजनों ने वातावरण को भक्तिरस से सराबोर कर दिया।

समारोह की व्यवस्थाओं एवं संचालन में स्वामी सुमेधानन्द शिष्य मण्डल के अध्यक्ष श्री चतर सिंह सूर्यवंशी, श्री अमर सिंह आर्य, श्री रमेशचन्द्र शास्त्री, श्री विक्रम महाजन, श्री सुनील कुमार, श्री सुरेश कुमार, श्री विशाल शास्त्री एवं कुमारी चेतना आर्या का विशेष योगदान रहा। श्रीमती करुणा आर्या मंत्री दयानन्द मठ चम्बा के निर्देशन में विद्यालय की सभी अध्यापिकाओं ने भी व्यवस्था में अपना विशेष योगदान दिया।

इस अवसर पर श्री धर्मेन्द्र कुमार-छपरौली, श्री अनीश आर्य-रठौड़ा, श्री बलविन्दर शास्त्री-दीनानगर के अतिरिक्त छत्तीसगढ़ स्थित स्वामी सुमेधानन्द वैदिक गुरुकुल, कटंगपाली के कार्यकर्ता एवं सहयोगीगण बड़ी संख्या में पधारे। उनके अतिरिक्त पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, रातस्थान, बंगाल, बिहार आदि प्रान्तों से अनेक श्रद्धालुओं ने उत्साहपूर्वक भाग लिया।

यज्ञ में जालन्धर के अबरोल परिवार ने यजमान के रूप में सहभागिता कर वैदिक परम्परा का निर्वाह किया।

यह सम्पूर्ण समारोह अत्यन्त श्रद्धा, अनुशासन एवं भव्यता के साथ सम्पन्न हुआ। तीनों दिवस ऋषि-लंगर की उत्कृष्ट व्यवस्था की गई थी। समापन अवसर पर आचार्य महावीर सिंह जी ने सभी संन्यासियों, विद्वानों एवं उपदेशकों को दक्षिणा एवं सम्मान भेंट कर आदरपूर्वक विदा किया।

दयानन्द मठ, चम्बा सम्पूर्ण हिमाचल प्रदेश में वैदिक शिक्षा एवं समाजसेवा का एक अद्वितीय केन्द्र है, जहाँ संस्कृत महाविद्यालय, आयुर्वेद रसायनशाला, दयानन्द आदर्श उच्च माध्यमिक विद्यालय तथा विभिन्न समाजोपयोगी गतिविधियाँ संचालित हो रही हैं।



सम्पादक - प्रो. विट्ठलराव आर्य

संस्कृति और सभ्यता : एक विश्लेषण

— डॉ. रामसनेही लाल शर्मा 'यायावर'

“संस्कृति” (Culture) बहुप्रचलित और बहुआयामी शब्द है। इसे परिभाषित करने में मानव ज्ञान हर बार कठिनाई में पड़ा है। मानवीय ज्ञान का शायद कोई क्षेत्र ऐसा नहीं, जो इस शब्द की व्याख्या न करना चाहता हो। परन्तु यह आज भी स्वल्प परिभाषित बना हुआ है। इतिहास, साहित्य, धर्म दर्शन, राजनीति, विज्ञान, समाजशास्त्र, नीतिशास्त्र, नृत्य, मानवशास्त्र, मनोविज्ञान और शिक्षा शास्त्र आदि सभी ‘संस्कृति’ की सर्व सम्मत व्याख्या देने का असफल प्रयत्न करते रहे हैं। हाँ, इनके द्वारा प्रस्तुत की गई परिभाषाएँ और व्याख्याएँ अलग—अलग ढंग से संस्कृति के स्वरूप निर्धारण का कार्य अवश्य करती रही हैं। इतिहासकारों ने संस्कृति को किसी समूह या देश के विशेष कलात्मक अथवा बौद्धिक विकास के रूप में ग्रहण किया है। जीवन के ये पक्ष निःसन्देह संस्कृति के अंग हैं परन्तु नेतृत्व की वैज्ञानिक दृष्टि विशेष विकास के अतिरिक्त सामान्य विकास प्रकारों को भी संस्कृति का अविभाज्य अंग मानती है। परन्तु ये सारी ज्ञान सारणियाँ एक तथ्य पर एकमत हैं और वह यह है कि संस्कृति केवल मानव की निर्मित है। उसकी इस उपलब्धि में किसी अन्य जीवन जाति की साझीदारी नहीं। शायद यह कहना अधिक सार्थक होगा कि जीव जातियों की प्रकृति प्रदत्त चंचलता और सहज जीवनचर्या को एक नियम और अनुशासन में बांधने का प्रयास करके ही मानव ने संस्कृति को जन्म दिया था।

संस्कृति का सम्बन्ध संस्कार से है और उसका क्षेत्र अपरिसीम है। वह मानव के मन, चित, बुद्धि, हृदय और आचरण, या यों कह सकते हैं कि उसके समूचे अन्तर्वाह्य का संस्कार करती है। वह उदात्त मूल्यों का समुच्चय है। वह एक ऐसा अधिष्ठान है जो मानव की समूची चेतना को ऊर्जस्वी बनाता है। वह सम्पूर्ण जगत के साथ मानव का सम्बन्ध जोड़ती है। आचरण का संस्कार करने वाला धर्म, विचार का संस्कार करने वाला दर्शन, भाव का संस्कार करने वाली ललित कलाएँ और हृदय को संस्कारित करने वाला साहित्य आदि संस्कृति के अंग हैं। संस्कृति अन्तः अनुशासन की प्रक्रिया है। संस्कृति के तात्त्विक और दार्शनिक व्याख्याकार डॉ. यशदेव शल्य की यह बात अधिक युक्तिसंगत और सार्थक लगती है “मानव संस्कृति स्व—निर्धारक है और इस निर्धारकता में एक अनिवार्यता भी है, चंचलता और अनियम के लिए कहीं स्थान नहीं है।

जैन विद्वान् विद्यानन्द मुनि की धारणा है कि “मनुष्य को पशु धर्म से ऊपर संस्कृति ने उठाया, स्वर्ग के देव भी ईर्ष्या करने लगे, इतना आचार सम्पन्न बनाया।” उनके अनुसार संस्कृति शब्द एक महावाक्य है। इसके अक्षर जितने कम हैं, अर्थ उतना ही विशाल और विराट् है। वे संस्कृति को मानव की आन्तरिक महानताओं और सौंदर्य को उद्घाटित करने वाली क्रिया मानते हैं। उनका कहना है कि “संस्कृति मानव में विद्यमान उसके अन्तःस्थ सौन्दर्य को दीप्त करने वाली वह प्रक्रिया है, जिसके आश्रय से जीवन अपने उच्चतम ध्येय एवं पवित्र संकल्पों को प्राप्त करने का दिग्बोध पाता है। यह संस्कृति अवगुणों को दूर करती है।

वस्तुतः संस्कृति को व्याख्यायित करते हुए विद्यानन्द जी भावपूर्ण शब्दावली का प्रयोग करते हैं, परन्तु उनसे थोड़ा अलग हटकर विचारपूर्ण भाषा और संयत शब्दावली में हिन्दी कविता में युगान्तर प्रस्तुत करने वाले कविवर अज्ञेय जी संस्कृति को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि “संस्कृति मूलतः एक मूला दृष्टि है और उससे निर्दिष्ट होने वाले निर्माता प्रभावों का नाम है, उन निर्माता प्रभावों का, जो समाज को, व्यक्ति को, परिवार को सबके आपसी सम्बन्धों को निरूपित और निर्धारित करते हैं।”

परिभाषाएँ और भी हैं। इन परिभाषाओं में कहीं तो संस्कृति को “मनुष्य के लौकिक एवं पारलौकिक सर्वाभ्युदय के अनुकूल आचार—विचार” के रूप में पहचाना गया और कहीं “प्रकृति को ध्येय के अनुकूल बनाने की क्रिया के रूप में स्वीकारा गया”, कहीं कहा गया कि “संस्कृति ऐसी संस्थानीकृत (पैटर्न्ड) तथा क्रियात्मक रूप से ग्रथित प्रथाओं को कह सकते हैं, जो किसी विशिष्ट सामाजिक समुदाय से सम्बन्धित विशिष्ट मानव व्यक्तियों में सामान्य हो” कहीं उसे महान मूल्यों और विश्वमैत्री की भावना से जोड़ते हुए यह भी कहा गया कि “मनुष्य की चेतना में कुछ ऐसी विलक्षण शक्ति है कि प्रकृति की स्वार्थमय संवेदना, ज्ञान की निरपेक्ष साधना और सामान्य भाव तीनों में उसकी गति सम्भव है। उनमें चेतना की गति का तीसरा चरण ही संस्कृति का चरण है। इसे मनुष्य की भावना स्वार्थ की सीमा से उठकर परार्थ की ओर अभिमुख होती है।”

जैसा कि कहा गया कि परिभाषाएँ तो अनन्त हैं परन्तु आवश्यकता परिभाषाएँ नहीं, उनका लघुतम रूप देने की है। वह लघुतम रूप यह है कि —

- संस्कृति केवल मानव जाति की निर्मिति और उपलब्धि है, मानवैतर जीवों से उसका कोई सम्बन्ध नहीं।
- संस्कृति मानव के अन्तर का भी संस्कार करती है और वाह्य का भी।
- संस्कृति विचार, मूल्य या धारणा के रूप में पहचानी जा सकती है। यद्यपि कुछ लोग विज्ञान के प्रति अधिक अनुराग के कारण उसे केवल इन्द्रियगोचर वस्तुओं तक ही सीमित कर देना चाहते हैं।
- संस्कृति के वाहक तत्व धर्म, दर्शन, इतिहास, कला और सभ्यता सामुदायिक मानव जीवन के लिए अर्थवान् होकर ही उपयोगी हो सकते हैं।
- संस्कृति मानव की संस्थानीकृत या सामुदायिक विशिष्टता है।
- संस्कृति मानव के भीतर के देवत्व (यानि परिपूर्ण मानवत्व) के जगाने की प्रक्रिया है। ठीक बात तो यह है कि सामाजिक अनुभवों को ही संस्कृति कहते हैं, व्यक्तिगत अनुभवों को नहीं। व्यक्तिगत अनुभव सामाजिक अनुभव के दर्पण में ही संस्कृति कहलाता है।
- संस्कृति जड़ और स्थिर नहीं होती। उसकी उल्लेखनीय विशेषता उसकी गतिशीलता है।

- संस्कृति के द्वारा मनुष्य समाज में अपनी परम्पराओं के साथ अपने आपको सम्बद्ध करता है।
- संस्कृति के द्वारा मनुष्य को अपने जीवन में रचनात्मक संतोष के साधन उपलब्ध होते हैं।
- संस्कृति मनुष्य को अन्तःअनुशासन की शक्ति देती है। सभ्यता :—

‘सभ्यता’ (Civilization) का सम्बन्ध सभा से है। सभा के सदस्य को सभ्य करने की परम्परा थी। सभ्यता मूलतः सामाजिक आचरण है। सभा के मध्य व्यक्ति का शिष्ट आचरण सभ्यता कहा जायेगा। इसलिए सभा से सम्बन्धित और समाज के योग्य व्यक्ति को ही सभ्य कहा जाना चाहिए। रघुवंश में सुशील विनम्र और शिष्ट व्यक्ति को सभ्य कहा गया है। अतः सभ्यता के शब्दकोषीय अर्थ, विनम्रता, सुशीलता, कुलीनता, सदस्यता, मन—भावन, शराफत तथा किसी जाति अथवा राष्ट्र की वे बातें, जो उसके सौजन्य और शिक्षित एवं उन्नत होने की सूचक हैं, आदि कहे गये हैं। यदि गहराई से इन अर्थों को समझने की प्रक्रिया से गुजरें तो सभ्यता का सम्बन्ध वाह्य आचरण एवं व्यवहार की श्रेष्ठता से जुड़ेगा।

सभ्यता उन्नति और परिष्कार के वाह्य सामुदायिक साधनों में भी प्रतिफलित होती है। उसे समाज के तीन घटकों से बनी सत्ता के रूप में स्वीकार किया जा सकता है —

प्रौद्योगिकी, सामाजिक संरचना तथा दर्शन। इनमें भी प्रौद्योगिकी मुख्य घटक है क्योंकि मनुष्य की बुद्धि जिन उच्च साधनों और सुविधाओं का आविष्कार कर लेती है, वे भी सभ्यता के उपादान हैं। आकाश चूमते भव्य प्रासाद, कलात्मक वस्तुएँ, आकर्षक मूर्तियाँ, भव्य चित्र, बड़े—बड़े कारखाने, बहुमूल्य वस्त्र, कीमती आभूषण, सौन्दर्य प्रसाधन और विलास की वस्तुएँ आदि भी सभ्यता के उच्च चिन्ह हैं। इनके अतिरिक्त मनुष्य के पारस्परिक आचार—व्यवहार, समूह के मध्य मनुष्य का शिष्टाचार आदि भी सभ्यता के ही अन्तर्गत आयेंगे। इसलिए प्रगति प्रकाशन मार्को से प्रकाशित दर्शनकोष में

ओ३म् ध्वनि का जयकारा

हर घर गूंजे, घर—घर गूंजे,
ओ३म् ध्वनि का जमकारा।
पाखण्डियों के चंगुल से दिलवाना है,
जीवनभर का छुटकारा।
गहन अंधकार को पार करके,
फैलाना है अब उजियारा।
ओ३म् ध्वनि के जयकारे से,
गुंजायमान हो विश्व सारा।
निरन्तर प्रकाशमान होते हैं,
जैसे चाँद सितारा।
बहुत सुन्दर, बहुत प्यारा,
भारत देश हमारा।
वैदिक संस्कृति और संस्कारों से,
परिपूर्ण है आर्यसमाज।
जो दब चुके हैं आज के दौर में,
आर्यजन बनें उनकी आवाज।
वैदिक शिक्षाओं को अपनाकर,
मिटता हमारा अंधियारा।
हर घर गूंजे, घर—घर गूंजे,
ओ३म् ध्वनि का जयकारा।।1।।
गहन ध्यान में ओ३म् ध्वनि,
लगती है हमें प्यारी।
दूर हो जाती है मन से,
चिंताएँ, परेशानियाँ सारी।

ओ३म् ध्वनि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का सार है,
सुनो ध्यान से लगता जीवन का उपहार है।

मन से शान्त होना लगता है,
हम सभी को प्यारा।
चिंताओं से मुक्ति पाकर,
हल्का लगता मन हमारा।
वैदिक शिक्षा पाकर,
जीवन से अंधकार दूर भागेगा।
जो सो गया हो स्वप्नों में,
वैदिक शिक्षा पाकर वह जागेगा।
गाते रहो वैदिक गीतों को,
साथ मिलकर गाएगा जग—सारा।

हर घर गूंजे, घर—घर गूंजे,
ओ३म् ध्वनि का जयकारा।।2।।
— दीपक कुमार छिल्लर
मो.:— 9990422051

सभ्यता को “किसी समाज की भौगोलिक तथा आत्मिक उपलब्धियों का योग कहा गया है। मनुष्य सभ्य इसलिए बनता है कि लोग उसे अकुलीन, अशिष्ट, जंगली और गंवार न समझ लें। समाज में उसकी अप्रतिष्ठा न हो। दूसरे शब्दों में ‘समाज का भय’ या ‘निन्दा की आशंका’ सभ्यता का प्रेरक तत्व है। समाज में प्रतिष्ठा पाने की बलवती आकांक्षा लोगों को सभ्य बनाने को बाध्य करती है।

संस्कृति और सभ्यता —

‘संस्कृति और सभ्यता’ को समानार्थी समझने का भ्रम सामान्यजनों, विद्वानों और मनीषियों के मध्य भी व्याप्त है। ब्रह्मलीन स्वामी करपात्री जी और डॉ. यशदेव शल्य जैसे विद्वान् भी दोनों को एक ही मानते हैं। स्वामी जी कहते हैं — संस्कृति और सभ्यता में कोई खास अन्तर नहीं है। सम्यक् कृति ही संस्कृति और सभा में साधुता ही सभ्यता है। आचार—विचार, रहन—सहन, बोल—चाल आदि की सभ्यता या साधुता का निर्णय शास्त्र से ही हो सकता है। वेदादि शास्त्रों द्वारा निर्णीत सम्यक् एवं साधु चेष्टा ही सभ्यता है और वही संस्कृति है। डॉ. यशदेव शल्य भी इन्हें एक ही मानने का आग्रह करते हैं। वस्तुतः इसका कारण यह है कि इन दोनों की संरचना, गठन और स्वरूप में बहुत सूक्ष्म अन्तर है। पाश्चात्य मनीषियों में काण्ट ने संस्कृति और सभ्यता में अन्तर किया। श्लेग्लेर भी दोनों को न केवल अलग—अलग बल्कि विरोधी रूप में संकल्पित करते हैं।

संस्कृति अन्तर के संस्कार पर जोर देती है और मानकर चलती है कि अन्तर के संस्कारित हो जाने पर वाह्य आचरण तो संस्कारित हो ही जायेगा, जबकि सभ्यता ऐहिक ध्येयों की पूर्ति से सम्बन्धित है। असन—वसन और निवसन की उचित सामुदायिक और उचित व्यवस्था करने वाली व्यवस्थाएँ सभ्यता है। ‘प्रकृति द्वारा प्रदत्त पदार्थों, तत्वों और शक्तियों का प्रयोग करके मनुष्य ने भौतिक जगत् में जो उन्नति की है, उसी को हम सभ्यता कहेंगे। परन्तु जीवन की अन्तः चेतना को सरस, सुन्दर और कल्याणमय बनाने वाली प्रक्रिया है संस्कृति। ‘सभ्य’ व्यक्ति ‘संस्कृत’ भी हो, यह आवश्यक नहीं, परन्तु ‘संस्कृत’ व्यक्ति तो सभ्य होगा ही।

संस्कृति चिन्तन और विचार से प्रोद्भूत मणि है, जबकि सभ्यता मानव के वाह्य व्यवहार को परिचालित करने वाली शक्ति है। सभ्यता मानव को प्रकृति के समुचित दोहन की प्रेरणा देती, इसलिए प्राकृतिक वातावरण, जलवायु, सर्दी, गर्मी, नदी, नाले, पर्वत, वर्षा आदि से मिलकर बने समग्र भौतिक परिवेश का प्रभाव सभ्यता पर पड़ता है। कभी—कभी सभ्यता अतिवादी होकर मानव का हित करने के स्थान पर उसका घोर अहित कर डालती है। पर्यावरण का प्रदूषण और युद्ध (नाभकीय और रासायनिक शस्त्रों का प्रयोग भी) जैसे खतरे हमारी आज की यात्रिक और महानगरीय सभ्यता की ही देन है, जबकि संस्कृति सदा कल्याणकारी ही होगी। संस्कृति शान्ति प्रिय है। इसका स्वभाव प्रारम्भ से ही शान्ति प्रिय रहा है। यह मानवीय है, दयालु और संवेदनशील है, शाश्वत मूल्यों की आग्रही है, जो कि हमारी आध्यात्मिक और नैतिक समृद्धि और हममें से प्रत्येक की व्यक्तिगत योग्यता बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील रहती है। इतना ही नहीं वह व्यक्ति के स्वतंत्र विकास के लिए संकल्पकृत है, उसकी ऐसी स्वतंत्रता के लिए जो कि वास्तविक हो। भावी विकास के लिए जो भी आवश्यक है, उसे पाने का प्रयत्न ही संस्कृति है।

भारतीय चिन्तन की परिधि में बाँधकर यदि इस बात को किसी कूल किनारे लगाना हो तो कहना होगा कि संस्कृति का प्रेरक गुण ‘सत्’ है और सभ्यता का ‘रज’। संस्कृति का फलक विस्तृत है, उसकी पहुँच मानव के अन्तरतम तक है और उसका प्रभाव अधिक व्यापक और स्थाई है। सभ्यता का क्षेत्र अपेक्षाकृत संकुचित है। वह वाह्य जगत तक सीमित है। संस्कृति मानव के दीर्घकालिक अनुभवों का ज्योतिर्मय संस्कार पुंज है, जबकि सभ्यता बुद्धि के आधार पर सीखा हुआ सामाजिक आचरण है। संस्कृति का प्रभाव चिरंतन और स्थाई होता है। मानव का मानवत्व उसकी संस्कृति में निहित है। सामाजिक जीवन के वाह्य परिवर्तन सभ्यता के द्वारा संचालित होते हैं। संस्कृति उनसे अप्रभावित है। दो राष्ट्रों और दो मानव समूहों की सभ्यता अलग—अलग होगी, परन्तु उनकी संस्कृति समान हो सकती है। भारतीय समाज रचना संदियों के झंझावातों और आघातों को सहन करके भी इसलिए सुरक्षित और जीवत है कि वह संस्कृति से उद्भूत है। इसलिए उसके वाह्य स्वरूप उसकी ‘सभ्यता’ में समयानुकूल परिवर्तन होते रहे, परन्तु उसकी आन्तरिक संस्कृति आज भी सुरक्षित है।

संस्कृति मानव की स्व कल्याण के क्षेत्र में की गई ऊर्ध्वमुखी यात्रा का परिणाम है। वह मानवीय गवेषणा है। वह किसी एक जन की खोज नहीं। वह मानव समुदाय की अनन्त और निरन्तर चलने वाली अन्वेषण यात्रा का परिणाम है। सभ्यता उस अंतर्यात्रा का वाह्य पड़ाव है। संस्कृति अधिक सूक्ष्म भी है। वह पुष्प में सुगन्ध की तरह सभ्यता में व्याप्त रहती है। संस्कृति व्यापक भी है। सभ्यता अपेक्षाकृत स्थूल है। यदि समग्र मानवता को एक चित्र के रूप में स्वीकारें तो चित्र में प्रयुक्त रंग, तूलिका फलक आदि सभ्यता है और उस चित्र में व्यक्त सूक्ष्म भाव, क्षमा, दया, करुणा, ममता और वात्सल्य आदि संस्कृति है। फिर भी इतना निश्चित है कि सभ्यता और संस्कृति एक दूसरे की पूरक हैं। सभ्यता संस्कृति की वाह्य अभिव्यक्ति है और संस्कृति सभ्यता का आन्तरिक प्रभाव। अन्त में संस्कृति और सभ्यता के अन्तर को और अधिक सार्थक ढंग से अभिव्यक्त करने के लिए डॉ. मनोहर शर्मा की शब्दावली उधार लेकर यों कहना होगा—

“मानव मन की अन्तर्मुखी प्रवृत्तियों से उसका जो विकास हुआ है, उसका नाम संस्कृति है। संस्कृति से सामाजिक जीवन का आदर्श निर्माण हुआ। मनुष्य की वाह्य प्रवृत्तियों की प्रेरणा से जो विकास होता है, वह सभ्यता है।” इस प्रकार संस्कृति आत्मा है और सभ्यता शरीर।

— 86, तिलकनगर, बाईपास रोड, फीरोजाबाद—283203

महर्षि दयानन्द के जीवन का सर्वोपरि लक्ष्य – परोपकार था!

- कृष्णचन्द्र गर्ग

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के जीवन में अन्दर बाहर सत्य और सात्विकता ओत-प्रोत थी। वे हर प्रकार के आडम्बर से परे थे। लोको पकार उनका एकमात्र लक्ष्य था। परमात्मा ने उन्हें बुद्धिबल और नैतिक बल गजब का दिया था। उन्होंने समाज की स्थिति का तथा पुस्तकों का स्वाध्याय खूब किया था। उनकी स्मरण शक्ति कमाल की थी। व्याख्यान वे सरल और स्पष्ट भाषा में दिया करते थे। उनकी शैली मधुर और तर्कपूर्ण होती थी। उन्होंने सोई हुई हिन्दू जाति को जगाया। उसके खोए हुए गौरव को वापिस दिलाया। उसकी कायरता, अज्ञानता, भीरुता और अन्धविश्वास को धोया।

महर्षि दयानन्द ने डंके की चोट से ऐलान किया कि आर्य लोग जो आजकल हिन्दू कहलाते हैं भारतवर्ष के ही मूल निवासी हैं। इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि आर्य भारत में कहीं बाहर से आए थे। आर्यों का संस्कृत भाषा में साहित्य ही संसार में सबसे पुराना साहित्य है। संस्कृत के किसी ग्रन्थ में नहीं लिखा कि आर्य भारतवर्ष में कहीं बाहर से आकर बसे थे। इस देश का सबसे पहला नाम आर्यावर्त था अर्थात् आर्यों का देश। उससे पहले इसका कोई और नाम न था। इस प्रकार उन्होंने हिन्दुओं के मनोबलों को बढ़ाया। स्वामी जी हिन्दुओं की सभी कमियों और कमजोरियों के लिए पुराणों को जिम्मेदार मानते थे। वे पुराणों को महर्षि वेद व्यास जी की रचना न मानते थे। वे लिखते हैं “जो अठारह पुराणों के कर्ता व्यास जी होते तो उनमें इतने गपौड़े न होते क्योंकि शारीरिक सूयोगदर्श के भाष्य आदि व्यास जी कृत ग्रन्थों को देखने से पता लगता है कि वे बड़े विद्वान, सत्यवादी, धार्मिक योगी थे। वे ऐसी झूठी बातें कभी न लिखते जैसी पुराणों में हैं।” स्वामी जी मूर्तिपूजा को भारत के सारे अनिष्टों का मूल मानते थे। पुराणों ने ही मूर्तिपूजा को प्रोत्साहित किया और हिन्दुत्व की कब्र खोद दी। अवतारवाद, जन्म पर आधारित जाति-प्रथा, सती प्रथा, विधवा विवाह का निषेध आदि, अनेक ऐसी कुरीतियां जिनके कारण हिन्दू बदनाम हैं, सबको पुराणों में मान्यता प्राप्त है। पुराणों की ऐसी मान्यताएं वेद विरुद्ध हैं। यदि पुराण और पौराणिक विचार हिन्दुओं में न होते तो ईसाईयों और मुसलमानों को हिन्दुओं के विरोध में कहने को कुछ भी न मिल पाता और न ही इतनी आसानी से हिन्दू मुसलमान और ईसाई बनते। हिन्दू मत कच्चे धागे की तरह बन गया था जिसे हलके झटके से तोड़ा जा सकता था। महर्षि दयानन्द ने पुराणों का पुरजोर खण्डन किया और वैदिक धर्म की श्रेष्ठता को प्रकट किया। इस्लाम और ईसाईयत की कमियां और खराबियां दिखाकर हिन्दुओं में आत्मविश्वास पैदा किया जिससे उन्हें अपने वैदिक धर्म में बने रहने की प्रेरणा मिली और हिन्दू मत लोहे की छड़ सा मजबूत हो गया। महर्षि दयानन्द सत्य के प्रबल पक्षधर थे। आर्य समाज के दस नियमों में चौथा नियम उन्होंने दिया - सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए। वे मानते थे कि मनुष्य का आत्मा सत्य-असत्य को जानने वाला है। परन्तु पण्डित लोग अपनी प्रतिष्ठा, हानि और निन्दा के भय से सत्य को प्रकट नहीं करते। उन्होंने ‘स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश’ में उपनिषद का निम्न लोक उद्धृत किया है -

न हि सत्यात्सरो धर्मो नानुतात्पातकं परम्।

न हि सत्यात्परं ज्ञानं तस्मात्सत्यं समाचरेत्।।

अर्थात् सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं है, झूठ से बढ़कर कोई पाप नहीं है और सत्य से बढ़ कर कोई ज्ञान नहीं है। इसलिए सत्य का आचरण करें। महर्षि दयानन्द दिखावे के बाहरी चिन्हों को धर्म से न जोड़ते थे। वे जब किसी को रुद्राक्ष पहने देखते थे तो उससे कहा करते थे कि इन गुठलियों के पहनने से क्या लाभ है। इससे मुक्ति नहीं होती। मुक्ति तो ज्ञान से होती है। मनुस्मृति में भी कहा गया है - ‘न लिंगम् धर्म कारणं’ अर्थात् बाहरी चिन्हों से व्यक्ति धार्मिक नहीं बनता। धार्मिक तो शुभ आचरण से बनता है। महर्षि मनु ने कहा है - आचारः परमो धर्मः। महर्षि दयानन्द मानते थे कि हमारा नाम आर्य है, हिन्दू नहीं। आर्य का अर्थ है श्रेष्ठ पुरुष। अरब के लोग काफिर और दुष्ट को हिन्दू कहते हैं। विदेशी मुसलमानों ने हमें हिन्दू नाम दिया है। स्वामी जी श्रीकृष्ण जी को एक महापुरुष मानते थे। सत्यार्थप्रकाश में वे लिखते हैं “देखो! श्री कृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अति उत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र धर्मात्माओं के समान है। जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण जी ने जन्म से मृत्यु तक बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नहीं लिखा। और इस भागवत वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाए हैं। दूध, दही, मक्खन आदि की चोरी, कुब्जा दासी से सम्भोग, परस्त्रियों से रासमण्डल, क्रीड़ा आदि झूठे दोष श्री कृष्ण जी में लगाए हैं। इसको पढ़-पढ़ा, सुन-सुना के अन्य मत वाले श्री कृष्ण जी की बहुत सी निन्दा करते हैं। जो यह भागवत न होता तो श्री कृष्ण जी जैसे महात्माओं की झूठी निन्दा क्यों कर होती।”

महाभारत के उद्योगपर्व (विदुरनीति) में एक श्लोक है -

पुरुषा बहवो राजन् सततं प्रियवादिनः।

अप्रियस्य तु पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः।।

महात्मा विदुर धृतराष्ट्र से कहते हैं - हे राजन! इस संसार में दूसरे को निरन्तर प्रसन्न करने के लिए प्रिय बोलने वाले प्रशंसक लोग बहुत हैं। परन्तु सुनने में अप्रिय लगे और वह कल्याण करने वाला वचन हो उसका कहने और सुनने वाला पुरुष दुर्लभ है। महर्षि दयानन्द ऐसे ही हितकारक वचन कहने वाले विरले मनुष्य थे। वे राजे-महाराजाओं के सामने, बड़े से बड़े अंग्रेज अफसरों की उपस्थिति में, मुल्ला मौलवियों और पण्डों की मौजूदगी में निर्भीक होकर सबके हित की सत्य बात कहा करते थे।

महर्षि दयानन्द ने राष्ट्रीय स्वाभिमान को जगाया, विशुद्ध भारतीयता पर बल दिया। सत्य-असत्य विवेक की प्रवृत्ति को जगाया, बुद्धिवाद को बढ़ावा दिया, अन्धविश्वास और रूढ़िवाद का खण्डन किया। स्वामी जी

मूर्तिपूजा को सब बुराईयों की जड़ मानते थे और मन्दिरों को उनके अड़े मानते थे। जुलाई 1869 की बात है। कानपुर में पं. गुरुप्रसाद और प्रयागनारायण ने ‘कैलाश’ और ‘बैकुण्ठ’ नामक दो मन्दिर बहुत रुपया लगाकर बनवाए थे। स्वामी जी ने उनसे कहा था कि आप लोगों ने लाखों रुपया व्यर्थ खो दिया। इससे तो यह अच्छा था कि कन्याकुब्ज कन्याओं का जो 30-30 वर्ष की कुमारी बैठी हैं, विवाह करवा देते या कोई कला-कौशल का कारखाना खोलते जिससे देश और जाति का भला होता। स्वामी जी का दरबार मित्र, शत्रु सबके लिए खुला था। वे सबके साथ प्रेम से बर्ताव करते थे। परन्तु यदि कोई उनके साथ दुष्टता का व्यवहार करने लगता तो वे रुद्ररूप धारण करके उसे दण्ड देने को तैयार हो जाते थे।

सन् 1872 में भागलपुर में प्रसंग आने पर स्वामी जी ने कहा कि हिन्दुओं में जो मुसलमानों के प्रति सहानुभूति का अभाव और द्वेष का भाव है उसका कारण यह नहीं कि हिन्दुओं को मुसलमानों से स्वाभाविक द्वेष है, वास्तव में उसका कारण हिन्दुओं के प्रति मुसलमानों का व्यवहार है।

महर्षि दयानन्द के जीवन का सर्वोपरि लक्ष्य परोपकार था। सन् 1868 के आरम्भ की बात है। कर्णवास में एक दिन पण्डित इन्द्रमणि ने स्वामी जी से कहा कि आप अवधूत होकर खण्डन-मण्डन के बखेड़े में क्यों पड़े हैं। तो उन्होंने उत्तर दिया कि “मेरे लिए बखेड़ा नहीं है, प्रत्युत यह ऋषि का ऋण चुकाना है। स्वार्थी लोगों ने ऋषि-सन्तान को कुरीतियों में फंसा रखा है। मुझे उसकी यह दीन दशा देखी नहीं जाती। मैंने उसे सन्मार्ग पर लाने का प्रण कर लिया है।” इसीलिए महर्षि ने आर्य समाज का छठा नियम बनाया - संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है। इसी प्रकार आर्य समाज का नौवां नियम बनाया - प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए। किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

सन् 1873 में कलकत्ता में स्वामी जी अपने व्याख्यानों में कहा करते थे कि जब तक वेद न पढ़ाए जायें संस्कृत की शिक्षा से कोई लाभ नहीं। पुराणों की बुरी शिक्षा से लोभ व्यभिचारी हो जाते हैं और जो विचारशील हैं वे धर्म से पतित होकर हानिकारक बन जाते हैं। स्वामी जी कहते थे कि पत्थरों को पूजने से पण्डितों की बुद्धि पत्थर हो गई है। इस कारण से वे सत्य-सिद्धान्तों को समझने में असमर्थ हैं। मैं उनकी जड़ पूजा छुड़वाकर उनकी बुद्धि को निर्मल करने का प्रयत्न कर रहा हूँ। वे यह भी कहते थे “मेरा काम लोगों के मन-मन्दिरों से मूर्तियां निकलवाना है, ईंट-पत्थर के मन्दिरों को तोड़ना-फोड़ना नहीं है।

सन् 1874 में मुम्बई में अनेक अंग्रेज कर्मचारी स्वामी जी से मिलने और उनके व्याख्यान सुनने आया करते थे और उनकी प्रशंसा करते थे। स्वामी जी अंग्रेजी राज्य की बहुत प्रशंसा किया करते थे। इसी कारण से बहुत से लोग उन्हें अंग्रेजों का गुप्तचर कह दिया करते थे। 1874 में नासिक में स्वामी जी ने यह भी कहा कि भारत में सही अर्थों में अंग्रेज ही ब्राह्मण हैं।

सन् 1878 में अजमेर में राय बहादुर श्याम सुन्दरलाल ने स्वामी जी से कहा कि आप मूर्तिपूजा पर इतना तीव्र आक्रमण क्यों करते हैं, उसे थोड़ा नम्र कर देने से भी तो काम चल सकता है। स्वामी जी ने उत्तर दिया - मूर्तिपूजा पर मृदु आक्रमण करने व उससे किसी प्रकार की सन्धि करने से हमारे सिद्धान्तों की भी वही दशा होगी जो अन्य सिद्धान्तों की हुई है और कुछ समय के बाद आर्य समाज पौराणिक होकर हिन्दुओं में मिल जाएगा।

भोजन कैसे भ्रष्ट होता है - फर्रुखाबाद में एक दिन एक साथ स्वामी जी के लिए कढ़ी और चावल बनाकर लाया और उन्होंने उसे खा लिया। इस पर ब्राह्मणों ने कहा कि आप भ्रष्ट हो गये जो साधों के घर का भोजन खा लिया। स्वामी जी ने उत्तर दिया कि भोजन दो प्रकार से भ्रष्ट होता है - एक तो यदि किसी को दुख देकर धन प्राप्त किया जाए और उससे अन्न आदि खरीद कर भोजन बनाया जाए, दूसरे भोजन मलिन हो या उसमें कोई मलिन वस्तु गिर जाए। साधु लोगों का मेहनत का पैसा है, उससे प्राप्त किया हुआ भोजन उत्तम है।

देश की भाषा हिन्दी - महर्षि दयानन्द देश की एकता के लिए आवश्यक समझते थे कि सारे देश की भाषा एक हिन्दी हो। इसलिए वे अपने ग्रन्थों का किसी दूसरी भारतीय भाषा में अनुवाद न करवाना चाहते थे। वे चाहते थे कि सभी देशवासी उनके ग्रन्थों को हिन्दी में ही पढ़ें। वे मानते थे कि भारतवासियों को हिन्दी भाषा सीख लेना कुछ कठिन नहीं है। जो इस देश में जन्म लेकर अपनी भाषा सीखने का परिश्रम नहीं करता उससे और क्या आशा की जा सकती है। उनके ग्रन्थों का अंग्रेजी आदि विदेशी भाषाओं में अनुवाद के वे विरोधी न थे।

सन् 1870 में मिर्जापुर में स्वामी जी ने एक बंगाली बनवारीलाल को अंग्रेजी सीखने के लिए और मैक्समूलर कृत वेदों का अंग्रेजी अनुवाद सुनने के लिए नौकर रखा था।

सन् 1879 में दानापुर में एक दिन एक सज्जन ने स्वामी जी से कहा कि आप इस्लाम के विरुद्ध न कहा करें। उस समय तो स्वामी जी ने कोई उत्तर न दिया। परन्तु सांयकाल को जो व्याख्यान दिया वह आदि से अन्त तक इस्लाम के सिद्धान्तों पर ही था जिसमें उनकी तीव्र समालोचना की। व्याख्यान का आरम्भ ही इन शब्दों से किया कि मुझे कहा गया है कि मुसलमानी मत का खण्डन मत करो, परन्तु मैं सत्य को छिपा नहीं सकता। जब मुसलमानों की चलती थी तब वे हम लोगों का तलवार से खण्डन करते थे। अब यह अन्धेर देखो कि मुझे उनका जिह्वा मासे खण्डन करने से मना करते हैं। मैं ऐसा अच्छा राज्य पाकर भला किसी की पोल खोलने से कभी रुक सकता हूँ।

सन् 1881 में रायपुर में ठाकुर हरिसिंह स्वामी जी से मिलने आए। स्वामी जी ने ठाकुर साहब से पूछा कि आपके यहां राजमन्त्री कौन है तो

उन्होंने उत्तर दिया कि शेख इलाही बख्श हैं, परन्तु वे जोधपुर गए हैं। उनके पीछे उनके भतीजे करीम बख्श (जो वहां उपस्थित थे) सब काम देखते हैं। यह सुनकर स्वामी जी ने कहा कि आर्य पुरुषों को उचित है कि मुसलमानों को अपना राजमन्त्री न बनाएं, ये दासीपुत्र हैं। यह सुनकर करीम बख्श और अन्य 5-7 मुसलमान, जो वहां बैठे थे, क्रोध में भर गए। एक दिन पण्ड्या मोहनलाल ने स्वामी जी से प्रश्न किया कि भारत का पूर्ण हित और जातीय उन्नति कब होगी। स्वामी जी ने उत्तर दिया कि एक धर्म, एक भाषा और एक लक्ष्य बनाए बिना ऐसा होना मुश्किल है। वेदों के सम्बन्ध में महर्षि लिखते हैं “मैं वेदों में कोई बात युक्ति विरुद्ध वा दोष की नहीं देखता और उन्हीं पर मेरा मत है।” महर्षि का यह मत सभी ऋषि-मुनियों के मत के अनुकूल ही है। वैशेषिक दर्शन में महर्षि कणाद लिखते हैं - बुद्धिपूर्वा वाक्यकृतिर्वेद। अर्थात् वेद का प्रत्येक वाक्य समझदारी से बना है। महर्षि मनु कहते हैं - यस्तर्केणानुसन्धते तं धर्मं वे द नेतरः। अर्थात् जो युक्ति से सिद्ध हो वही वेद का धर्म है, और कोई नहीं। महर्षि दयानन्द वेदों को ईश्वर कृत तथा सब सत्य विद्याओं का पुस्तक मानते थे। वे वेद पढ़ने का अधिकार स्त्री-पुरुष, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सबका मानते थे और वे मानते थे कि वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

महर्षि दयानन्द का स्वाध्यय बहुत विस्तृत था। “भ्रान्ति निवारण” पुस्तक में पण्डित महेशचन्द्र न्यायरल को उत्तर देते हुए वे लिखते हैं - “मैं अपने निश्चय और परीक्षा के अनुसार ऋग्वेद से ले के पूर्व मीमांसा पर्यन्त अनुमान से तीन हजार ग्रन्थों के लगभग मानता हूँ।” अंग्रेजी राज्य के सम्बन्ध में - 23 नवम्बर, 1880 को थियोसोफिकल सोसायटी की मैडम ब्लेवास्ति की लिखे पत्र में स्वामी दयानन्द भगवान को धन्यवाद देते हैं कि अंग्रेजी राज्य में मुसलमानों के अत्यचार से कुछ-कुछ छुटकारा मिला है। “मैं तथा अन्य सज्जन लोग पुस्तकें लिखने, उपदेश देने तथा धर्म के विषय में स्वतन्त्र हैं। इसका कारण इंग्लैण्ड की महारानी, पार्लियामेंट तथा भारत में राज्याधिकारी धार्मिक, विद्वान और सुशील हैं। अगर ऐसा न होता तो स्वतन्त्रता से व्याख्यान देना, वेदमत प्रचारक पुस्तकें लिखना सम्भव न होता और आज तक मेरा शरीर भी बचना कठिन था। इसलिए इन सभी महानुभावों को हम धन्यवाद देते हैं।” पण्डित महेन्द्रपाल आर्य (पूर्व नाम मौलवी महबूब अली) जिला बागपत बड़ौत के पास बरवाला में एक बड़ी मस्जिद के इमाम थे। महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थप्रकाश को पढ़कर वे आर्य समाज में आ गये। वे कहते हैं “मैं अज्ञानियों के टोले से निकल कर ज्ञानियों के टोले में आया हूँ। मुस्लिम समाज अनपढ़ व अन्धविश्वासियों का समाज है। आर्य समाज पढ़े लिखे बुद्धिजीवियों का समाज है। बाकी जिन्दगी मैं पढ़े लिखे अन्धविश्वासमुक्त नेक लोगों के साथ बिताना चाहता हूँ।” सत्यार्थप्रकाश के सम्बन्ध में प्रसिद्ध देशभक्त लाला हरदयाल एम.ए. के विचार - “इस महान ग्रन्थ के अध्ययन से मेरी विचारधारा बदल गई है। सोई हुई जाति के स्वाभिमान को जागृत करने वाला यह ग्रन्थ अद्वितीय है।”

वीर सावरकर की सत्यार्थप्रकाश पर टिप्पणी - “हिन्दू जाति की ठण्डी रगों में गर्म खून का संचार करने वाला यह ग्रन्थ अमर रहे। सत्यार्थप्रकाश की विद्यमानता में कोई विधर्मी अपने मजहब के शेखी नहीं मार सकता।”

महर्षि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश के अन्त में स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश में मनुष्य की परिभाषा में लिखते हैं -

“मनुष्य उसी को कहना कि विचारशील होकर अपनी तरह दूसरों के सुख-दुख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपनी पूरी ताकत से अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सब प्रकार से किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही बड़ा दुख झेलना पड़े, चाहे प्राण भी भले ही जावें परन्तु इस मनुष्यरूप धर्म से पृथक कभी न होवे।”

महाराजा भर्तृहरि जी का एक श्लोक है -

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु, लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्, अथैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा, न्यायात्पथः प्रचिचलन्ति पदं न धीराः।

अर्थात् नीति को जानने वाले लोग चाहे निन्दा करें या प्रशंसा करें, धन आए या जाए, मृत्यु अभी आ जाए या चिरकाल के बाद आए, परन्तु धैर्यवान लोगों के पग न्याय के मार्ग से विचलित नहीं होते। यह श्लोक महर्षि दयानन्द के जीवन पर पूरी तरह घटित होता है। सभी प्रकार के बिघ्न-बाधाओं, खतरों और प्रलोभनों से टक्कर लेते हुए स्वामी जी सत्य और न्याय के प्रचार पर डटे रहे। प्रसिद्ध कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला ने कहा था - हमारा सबसे अधिक उपकार महर्षि दयानन्द ने किया है।

महान कहानीकार उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द की एक कहानी है ‘आपका चित्र’। कहानी के नायक ने अपने कमरे में स्वामी दयानन्द का एक चित्र लटका रखा है। वह बता रहा है कि यह चित्र उसने क्यों लटका रखा है। “मैं उसे केवल इस कारण से अपने कमरे में लटकाए हुए हूँ कि स्वामी जी के जीवन का उच्च और पवित्र आचरण सदा मेरी आँखों के सामने रहे। जिस घड़ी सांसारिक लोगों के व्यवहार से मेरा मन उब जाए, जिस समय प्रलोभनों के कारण पग डगमगाएं अथवा प्रतिशोध की भावना मेरे मन में लहरें लेने लगे अथवा जीवन की कठिन राहें मेरे साहस व शौर्य की अग्नि को मन्द करने लगे, उस विकट बेला में उस पवित्र मोहिनी मूर्त के दर्शनों से आकुल व्याकुल हृदय को शान्ति हो, दृढ़ता धीरज बने रहें, क्षमा व सहनशीलता के मार्ग पर पग चलते चलें तथा मैं अनुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि इस चित्र से मुझे लाभ पहुँचा है और एक बार नहीं, कई बार।

831 सैक्टर 10 पंचकूला, हरियाणा

बंधुआ मुक्ति मोर्चा के पूर्व राष्ट्रीय महासचिव स्व. प्रो. श्योताज सिंह जी की 8वीं पुण्यतिथि के अवसर पर 29 अप्रैल, 2026 को यज्ञ एवं प्रतिभा सम्मान समारोह का आयोजन बंधुआ मुक्ति मोर्चा के राष्ट्रीय अध्यक्ष स्वामी आर्यवेश जी की उपस्थिति में किया गया श्री सुन्दर यादव ने कार्यक्रम का कुशल संचालन किया



बंधुआ मुक्ति मोर्चा के पूर्व राष्ट्रीय महासचिव स्व. प्रो. श्योताज सिंह जी की 8वीं पुण्यतिथि के अवसर पर 29 अप्रैल, 2026 को उनके पैतृक गांव—जैनाबाद, जिला—रेवाड़ी में विशेष यज्ञ एवं प्रतिभा सम्मान समारोह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर बंधुआ मुक्ति मोर्चा के राष्ट्रीय अध्यक्ष स्वामी आर्यवेश जी विशेष रूप से उपस्थित रहे। उनके अतिरिक्त स्वामी आदित्यवेश जी, जिला वेद प्रचार मण्डल के पूर्व प्रधान श्री प्रेमराज यादव भी कार्यक्रम में उपस्थित रहे। यज्ञ का संपादन स्वामी यशदेव जी प्रधान वेद प्रचार मण्डल रेवाड़ी ने बड़ी कुशलता के साथ किया।

स्वामी आर्यवेश जी ने अपने उद्बोधन में प्रो. श्योताज सिंह जी के जीवन पर प्रकाश डालते हुए बताया कि प्रोफेसर साहब एक संघर्षशील नेता थे। उन्होंने जीवन की सुख-सुविधाओं को त्यागकर संघर्ष का रास्ता चुना और समाज के बेसहारा गरीब एवं शोषित लोगों की लड़ाई लड़ी। उन्होंने बंधुआ मजदूरों, दलित एवं आदिवासियों तथा शोषित, पीड़ित किसानों के लिए आजीवन संघर्ष किया। इन कार्यों को करने में उन पर कई बार जानलेवा हमले भी किये गये। किन्तु वे इससे कभी घबराये नहीं, वे एक निडर व्यक्ति थे। वे प्रतिभा के धनी थे, बचपन से ही वे बुद्धिमान छात्र रहे और शिक्षा पूरी होने के बाद कॉलेज में कई वर्ष तक प्राध्यापक के रूप में कार्य किया। उन्होंने स्वामी अग्निवेश जी के साथ काम करने के लिए अपनी कॉलेज की नौकरी को ठुकराया और संघर्ष की आग में कूद पड़े। ऐसे व्यक्ति समाज में विरले ही हुआ करते हैं जो सभी सुख-सुविधाओं एवं जीवन की ऐषणाओं को ठुकराकर त्याग एवं तप का मार्ग चुनते हैं। प्रो. श्योताज सिंह जी का जीवन अत्यन्त पवित्र एवं सात्विक था। वे एक बार जो निश्चय कर लेते थे उससे फिर कभी पीछे नहीं हटते थे। ऐसे महान् व्यक्तित्व के जीवन से हम सभी को प्रेरणा लेनी चाहिए।

इस अवसर पर स्वामी आदित्यवेश जी एवं श्री प्रेमराज यादव ने



प्रो. श्योताज सिंह जी को श्रद्धांजलि देते हुए उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर विस्तार से प्रकाश डाला और उनके जीवन से प्रेरणा लेने के लिए श्रोताओं को प्रेरित किया। कार्यक्रम में गांव के प्रतिभावान छात्र एवं छात्राओं को प्रशस्ति पत्र, पुरस्कार राशि एवं शॉल देकर सम्मानित किया गया। इसी प्रकार गणमान्य लोगों को भी सम्मानित किया गया। इस पूरे कार्यक्रम के संयोजक श्री सुन्दर यादव ने सभी का धन्यवाद किया। कार्यक्रम के उपरान्त प्रसाद वितरण की समुचित व्यवस्था की थी।

करौथा काण्ड के शहीद उपाचार्य उदयवीर स्मृति दिवस एवं गुरुकुल विश्वभारती भैयापुर लाढ़ौत, रोहतक में पूर्व छात्र मिलन समारोह भव्यता के साथ हुआ सम्पन्न सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी ने की अध्यक्षता



करौथा काण्ड में शहीद हुए उपाचार्य उदयवीर शास्त्री जी की स्मृति में 13वाँ स्मरण दिवस दिनांक 10 मई, 2026 को गुरुकुल विश्वभारती भैयापुर लाढ़ौत, रोहतक में भव्यता पूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी के अतिरिक्त आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा के पूर्व प्रधान श्री रामपाल दहिया तथा अन्य गणमान्य महानुभाव विशेष रूप से उपस्थित रहे।

इस कार्यक्रम में गुरुकुल के पूर्व छात्रों की विशेष उपस्थिति रही। पूर्व के पढ़े हुए छात्रों ने अपने अनुभवों को साझा किया जिससे वर्तमान में पढ़ रहे गुरुकुल के छात्रों को विशेष प्रेरणा मिली।

इस अवसर पर स्वामी आर्यवेश जी ने अपने प्रेरणादायी प्रवचन में गुरुकुल विश्वभारती भैयापुर लाढ़ौत, रोहतक के आचार्यगणों की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि गुरुकुल केवल शिक्षा प्राप्त करने का स्थान नहीं, अपितु भारतीय संस्कृति, संस्कार, चरित्र निर्माण एवं राष्ट्रनिर्माण की महान तपोभूमि हैं। उन्होंने कहा कि आज के आधुनिक एवं भौतिकवादी युग में गुरुकुल शिक्षा पद्धति का महत्व और भी

अधिक बढ़ गया है, क्योंकि गुरुकुल विद्यार्थियों को केवल पुस्तकीय ज्ञान ही नहीं, बल्कि अनुशासन, आत्मसंयम, सेवा, सदाचार, राष्ट्रभक्ति एवं वैदिक संस्कृति का अमूल्य ज्ञान भी प्रदान करते हैं।

स्वामी जी ने करौथा काण्ड के युवा शहीद ब्रह्मचारी उदयवीर उपाचार्य जी की शहादत को पाखण्ड एवं अन्धविश्वास के विरुद्ध दिया गया बलिदान बताया। स्वामी जी ने कहा कि कथित सन्त रामपाल दास के करौथा सतलोक आश्रम के विरुद्ध चलाये गये आन्दोलन में ब्रह्मचारी उदयवीर जी शहीद हुए थे, ऐसे शहीद की त्याग एवं बलिदान को स्मरण करने का तात्पर्य यही है कि हम कभी भी अन्धविश्वास और पाखण्ड के साथ समझौता नहीं करेंगे। अन्धविश्वास एवं पाखण्ड व्यक्ति को अज्ञान एवं अन्धकार गढ़ने में डुबो देता है। उसके विवेक एवं तर्कशक्ति को समाप्त कर देता है। अतः हमें सदैव समाज में उन लोगों से सावधान रहने की जरूरत है जो लोगों की धार्मिक भावनाओं का दोहन करके उन्हें अपना अनुयायी बनाते हैं और अज्ञान के अन्धेरे में धकेल देते हैं। कथित सन्त रामपाल दास जो स्वयं को परमात्मा कहता है और उसके अन्धभक्त उसे परमात्मा कहकर सम्बोधित करते हैं इससे बड़ी अज्ञान की पराकाष्ठा तथा विडम्बना और क्या हो सकती है। स्वामी आर्यवेश जी ने ब्रह्मचारी उदयवीर जी को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उन्हें अन्धविश्वास के विरुद्ध लड़ने वाला एक मजबूत प्रहरी बताया।

इस अवसर पर श्री रामपाल दहिया जी ने भी करौथा काण्ड में ब्र. उदयवीर द्वारा दिये गये बलिदान से प्रेरणा लेने की अपील की और कहा कि रामपाल दास जैसे ढोंगी और पाखण्डी लोगों के झांसे में न आएं। उन्होंने कहा कि बड़े दुर्भाग्य की बात है कि हरियाणा की भोली जनता ऐसे पाखण्डियों के चंगुल में आ जाती है जिन्हें कोर्ट

द्वारा आजीवन कारावास की सजा दी हुई है। भले ही वे जमानत पर जेल से बाहर आ गये हों किन्तु इसका मतलब यह नहीं है कि वे अपराध तथा सजा से मुक्त हो गये हैं। सजा अभी भी बरकरार है और मुकदमा कोर्ट में विचाराधीन है। विडम्बना की बात यह है कि ऐसे लोग स्वयं को परमात्मा कहकर लोगों को अपने भ्रमजाल में फंसाने में सफल हो जाते हैं। कार्यक्रम का मंच संचालन गुरुकुल के निदेशक आचार्य नन्दकिशोर जी ने बड़ी कुशलता के साथ किया। कार्यक्रम में गुरुकुल के संस्थापक एवं संचालक आचार्य हरिदत्त जी का सान्निध्य एवं गुरुकुल प्रबन्धकारिणी सभा के कोषाध्यक्ष डॉ. रोहताश आर्य, डॉ. जयवीर मलिक, डॉ. विवेकानन्द शास्त्री, बहन दया आर्या, श्री राम अवतार पुरुषार्थी, श्री हनुमन्त सिंह आर्य आदि की गरिमामयी उपस्थिति रही। श्री राम अवतार पुरुषार्थी जी के ओजस्वी भजन भी श्रोताओं को सुनने को मिले। कार्यक्रम के अन्त में गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने कुछ विशेष आश्चर्यजनक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किये जिससे सभी दर्शकों एवं श्रोताओं को आश्चर्य मिश्रित प्रसन्नता हुई। कार्यक्रम सफलता के साथ सम्पन्न हुआ।



कन्या गुरुकुल रुड़की की छात्रा उदिता आर्या पुरे हरियाणा में द्वितीय स्थान पर रही। शिक्षा, संस्कार एवं सेवा के केंद्र हैं गुरुकुल - स्वामी आदित्यवेश आज के समय में बेटियां किसी से कम नहीं - आचार्या सुकामा पद्मश्री

रोहतक (13 मई 2026), विश्ववारा कन्या गुरुकुल, रुड़की की 12वीं की छात्रा उदिता आर्या ने हरियाणा शिक्षा बोर्ड परीक्षा में प्रदेशभर में द्वितीय स्थान प्राप्त कर रोहतक जिले एवं गुरुकुल का नाम गौरवान्वित किया है। इस उपलब्धि पर गुरुकुल में सम्मान समारोह का आयोजन किया गया, जिसमें विभिन्न सामाजिक एवं शैक्षणिक क्षेत्र की प्रमुख हस्तियां उपस्थित रहीं।

समारोह में सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद के राष्ट्रीय महासचिव स्वामी आदित्यवेश ने कहा कि गुरुकुल केवल शिक्षा के केंद्र नहीं, बल्कि संस्कार, सेवा और राष्ट्र निर्माण की प्रयोगशाला हैं। उन्होंने कहा कि बेटियां आज हर क्षेत्र में उत्कृष्ट प्रदर्शन कर समाज को नई दिशा दे रही हैं।

गुरुकुल की संचालिका एवं पद्मश्री सम्मानित आचार्या डॉ. सुकामा ने कहा कि आज की बेटियां किसी से कम नहीं हैं। यदि उन्हें उचित शिक्षा, संस्कार और अवसर मिलें तो वे देश और समाज का



नाम विश्व स्तर पर रोशन कर सकती हैं।

जिला शिक्षा अधिकारी श्रीमती मंजीत मलिक ने उदिता आर्या को शुभकामनाएं देते हुए कहा कि उसकी सफलता पूरे रोहतक जिले के लिए गर्व का विषय है। उन्होंने कहा कि यह उपलब्धि अन्य

छात्राओं के लिए भी प्रेरणास्रोत बनेगी। इस अवसर पर मानव सेवा प्रतिष्ठान दिल्ली के प्रधान श्री चन्द्रदेव शास्त्री, श्री सोमदेव शास्त्री, सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद के प्रदेश संगठन मंत्री डॉ. विवेकानन्द शास्त्री तथा उदिता आर्या के दादा श्री योगेंद्र सिंह तथा गुरुकुल की शिक्षिकाओं सहित अनेक गणमान्य व्यक्ति उपस्थित रहे। कार्यक्रम का संचालन गुरुकुल के मंत्री श्री रामपाल शास्त्री ने किया। उन्होंने बताया कि गुरुकुल की कक्षा 12वीं की जिन बेटियों ने परीक्षा दी थी। उन सभी के नब्बे प्रतिशत से ज्यादा अंक आए हैं। सभी अतिथियों ने आचार्या डॉ. सुकामा एवं उदिता आर्या को स्मृति चिन्ह एवं शॉल भेंटकर सम्मानित किया।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी तथा हरियाणा के शिक्षा मंत्री महिपाल ढांडा ने भी फोन पर शुभकामनाएं प्रेषित की।

— रामपाल शास्त्री, (मंत्री, कन्या गुरुकुल रुड़की)

स्व0 प्रो. बलजीत सिंह आर्य जी की 90वीं जयन्ती का कार्यक्रम समारोह पूर्वक हुआ सम्पन्न महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के सच्चे अनुयायी थे प्रो. बलजीत सिंह आर्य – स्वामी आर्यवेश

उत्तर प्रदेश के बागपत जिले में ग्राम जिवाना स्थित गुरुकुल इंटरनेशनल स्कूल में दिनांक 10 मई, 2026 (रविवार) को शिक्षाविद्, समाजसेवी एवं आर्य समाज के प्रख्यात विद्वान प्रो. बलजीत सिंह आर्य जी की 90वीं जयन्ती के अवसर पर उनकी प्रतिमा का भव्य अनावरण समारोह अत्यंत श्रद्धा एवं गरिमायुक्त वातावरण में सम्पन्न हुआ। समारोह में देशभर से आए विद्वानों, शिक्षाविदों एवं गणमान्य व्यक्तियों ने उपस्थित होकर उन्हें श्रद्धासुमन अर्पित किए तथा उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि सर्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान पूज्य स्वामी आर्यवेश जी महाराज ने अपने उद्बोधन में कहा कि प्रो. बलजीत सिंह आर्य जी महर्षि दयानंद सरस्वती के सच्चे अनुयायी थे। उन्होंने जीवनभर समाज में व्याप्त कुरीतियों एवं सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए निरंतर कार्य किया तथा युवाओं के चरित्र निर्माण एवं संस्कारयुक्त शिक्षा के लिए गांव-गांव जाकर जागरण अभियान चलाया। स्वामी जी ने कहा कि प्रो. आर्य ने महर्षि दयानंद सरस्वती एवं पूर्व प्रधानमंत्री चौधरी चरण सिंह जी की विचारधारा, आदर्शों एवं मूल्यों को समाज में आगे बढ़ाने का महान कार्य किया।

विशिष्ट अतिथि हिमाचल प्रदेश के सोलन-सुबाथू स्थित ध्यान योग आश्रम एवं आयुर्वेद शोध संस्थान के संस्थापक ब्रह्ममूर्ति देवव्रत



योगतीर्थ जी ने कहा कि प्रो. बलजीत सिंह आर्य जी युवाओं के सच्चे मार्गदर्शक एवं प्रेरणास्रोत थे। उनका जीवन शिक्षा, सेवा एवं समाज सुधार के लिए पूर्णतः समर्पित रहा।

राष्ट्रीय लोकदल के राष्ट्रीय सचिव डॉ. कुलदीप उज्ज्वल जी ने कहा कि हमें प्रोफेसर आर्य जी के आदर्श जीवन से प्रेरणा लेकर समाज एवं राष्ट्रहित में कार्य करना चाहिए।



कार्यक्रम का शुभारंभ आचार्य प्रमोद कुमार जी एवं आचार्य धन कुमार जी द्वारा वैदिक मंत्रोच्चारण एवं यज्ञ के साथ किया गया, जिसमें उपस्थित गणमान्य अतिथियों एवं श्रद्धालुओं ने आहुति अर्पित कर श्रद्धांजलि दी। तत्पश्चात विद्यालय परिसर में स्थापित प्रोफेसर बलजीत सिंह आर्य जी की प्रतिमा का विधिवत अनावरण किया गया।

इस अवसर पर सांसद डॉ. राजकुमार सांगवान जी, विधायक डॉ. अजय कुमार जी, अपर आयुक्त श्री अमित सिंह जी, राष्ट्रीय महासचिव श्री सुखबीर गठीना जी, पूर्व मंत्री श्री योगराज सिंह जी, पूर्व विधायक श्री साहब सिंह जी, श्री वीरपाल राठी जी, श्री सहेद सिंह जी, भाजपा जिलाध्यक्ष नीरज शर्मा जी सहित अनेक प्रतिष्ठित गणमान्य व्यक्ति उपस्थित रहे तथा अपने विचार व्यक्त किए। कार्यक्रम में आर.एल.डी. के युवा नेता श्री वीरेन्द्र राणा, श्री जयदेव आर्य-कंडेरा, श्री विक्रम सिंह राणा, श्री ब्रह्मपाल आर्य पूर्व प्रधान जिला आर्य उपप्रतिनिधि सभा बागपत, श्री धमेन्द्र आर्य-छपरौली, श्री अवनीश आर्य-रठौड़ा आदि भी कार्यक्रम में उपस्थित रहे।

समारोह का संचालन श्री नीरज पंडित जी ने कुशलतापूर्वक किया। अंत में विद्यालय के प्रबंधक डॉ. अनिल आर्य जी एवं निदेशक डॉ. सुनील आर्य जी ने सभी अतिथियों एवं उपस्थित जनसमूह का हार्दिक आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम के उपरान्त ऋषि लंगर की सुन्दर व्यवस्था की गई थी।

आर्य समाज के पुरोधा प्रसिद्ध भजनोपदेशक महाशय नन्दराम आर्य की प्रेरणा सभा एवं शांति यज्ञ में भारी संख्या में लोग एकत्रित हुए सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी ने प्रेरणा सभा में पहुंचकर दी श्रद्धांजलि पतंजलि योगपीठ के कर्णधार डॉ. यशदेव शास्त्री ने किया प्रेरणा सभा का संयोजन



आर्य समाज के प्रसिद्ध भजनोपदेशक ओजस्वी गायक रेडिया सिंगर स्व0 महाशय नन्दराम आर्य के देहावसान के उपरान्त उनके निवास स्थान ग्राम-बलाहा कलां, तहसील-नारनौल, जिला-महेन्द्रगढ़, हरियाणा में आयोजित प्रेरणा सभा एवं शांति यज्ञ में क्षेत्र के गणमान्य आर्यजन एवं राजनेता भारी संख्या में सम्मिलित हुए। इस प्रेरणा सभा का सम्पूर्ण संयोजन एवं दायित्व बहुत कर्मठ सुलझे हुए व्यक्तित्व के धनी एवं पतंजलि योगपीठ, हरिद्वार के महामंत्री डॉ. यशदेव शास्त्री जी ने संभाला हुआ था। प्रेरणा सभा में सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी, स्वामी सम्पूर्णानन्द जी, स्वामी हंसानन्द जी-कादीपुरी, स्वामी राजनाथ जी योगी, आचार्य अखिलेश जी योगी-हरिद्वार, स्वामी फक्कड़ बाबा आदि महात्माओं के अतिरिक्त डॉ. अभय सिंह यादव विधायक-नांगल चौधरी, श्री राधेश्याम शर्मा पूर्व विधायक नारनौल, श्री अतर लाल ठाकुर नेता अटोली, श्री बिरजानन्द जी एडवोकेट प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान, योगाचार्य डॉ. ओम प्रकाश-पाली, श्री रामनिवास जी आर्य कार्यकारी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा, श्री राधाकृष्ण आर्य पूर्व प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा, श्री प्रेमराज यादव पूर्व प्रधान जिला

वेद प्रचार महेन्द्रगढ़, श्री सत्यव्रत शास्त्री-नारनौल, कप्तान जगराम आर्य, श्री सत्यव्रत शास्त्री-नारनौल, डॉ. ऋतम्भरा शास्त्री (धर्मपत्नी डॉ. यशदेव शास्त्री), श्री रामानन्द आर्य प्रधान आर्य समाज बहरोड़, श्री रामकृष्ण शास्त्री-दयानन्द योगधाम बहरोड़, आचार्य नरेन्द्र आर्य-उपमंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा आदि ने दिवंगत आत्मा को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। स्व. महाशय नन्दराम आर्य जी जो वैद्य जी के नाम से विख्यात थे। उनकी लोकप्रियता, व्यवहार कुशलता और लोगों के प्रति आत्मीयता के कारण दूर-दूर से लोग उन्हें श्रद्धा सुमन अर्पित करने के लिए इस प्रेरणा सभा में पहुंचे।

स्वामी आर्यवेश जी ने श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा कि वैद्य नन्दराम जी आर्य समाज के पुरोधा थे। वे अपना कार्यक्रम प्रभावशाली तरीके से देते थे और श्रोताओं को मन्त्र मुग्ध कर देते थे। उनकी वाणी में ओज एवं प्रस्तुति धारावाहक थी। वे बड़े स्वाभिमानी तथा स्पष्ट वक्ता थे। उनके जीवन में लालच तथा लोभ दूर-दूर तक भी देखने को नहीं मिला। बड़ी-बड़ी राशि जो लोगों के द्वारा उन्हें पारितोषिक रूप में मिलती थी उसे वे कार्यक्रम के आयोजकों को सार्वजनिक रूप से घोषणा करके भेंट कर देते थे। स्वामी जी ने बताया कि नारनौल में आयोजित महर्षि दयानन्द जी की 200वीं जयन्ती के विशाल सम्मेलन में उन्हें पारितोषिक रूप में प्राप्त 25 हजार रुपये की धनराशि उन्होंने आयोजकों को मेरे द्वारा भेंट कराई थी। इसे देखकर सभी उपस्थित श्रोता आश्चर्यचकित हो गये थे। निःसंदेह महाशय नन्दराम जी के निधन से आर्य समाज की अपूर्णीय क्षति हुई है। जो बड़े लम्बे समय तक पूरी हो

पानी सम्भव नहीं है।

डॉ. यशदेव शास्त्री जी ने अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए भावुक होकर कहा कि वैद्य जी मेरे भाई थे। मेरे पिता जी उनके सगे मामा थे। उनके असामयिक निधन से मुझे व्यक्तिगत रूप से तथा परिवार एवं समाज को बहुत बड़ी ठेस मिली है। डॉ. यशदेव जी ने कहा कि स्व0 भाई नन्दराम जी की इकलौती बेटी मनीषा और हमारी भाभी वेदवती जी को मैं इतना ही कह सकता हूँ कि वे पूरे साहस के साथ अपने जीवन को आगे बढ़ाये। हम आपके सहयोग के लिए सदैव उपस्थित रहेंगे।

अन्तरराष्ट्रीय योगगुरु पूज्य स्वामी रामदेव जी महाराज ने भी टेलीफोन द्वारा अपनी श्रद्धांजलि वैद्य नन्दराम जी को दी और उन्हें एक योद्धा की संज्ञा देकर याद किया।

मंच का संचालन श्री अनिल आर्य ने किया और सभी आगन्तुकों को स्व0 महाशय नन्दराम के भतीजे श्री इन्द्रजीत ने धन्यवाद ज्ञापित किये। कार्यक्रम के उपरान्त पूज्य बहन डॉ. ऋतम्भरा जी ने सभी संन्यासियों एवं विद्वानों को दक्षिणा देकर सम्मानित किया और उपस्थित सभी श्रोताओं को वैद्य नन्दराम जी द्वारा संकलित ग्रन्थ भेंट किया गया। परिवार की ओर से इलाके के सभी गोशालाओं को 5100 रुपये प्रति गोशाला दान भी दिया गया। शांति पाठ के साथ प्रेरणा सभा का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।



एस.एस. डी.ए.वी. सीनियर सेकेण्ड्री स्कूल (अवांखा) दीनानगर में प्रेरणादायक विशेष कार्यक्रम आयोजित सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी ने विद्यार्थियों को सत्य, अनुशासन और संस्कारों का दिया संदेश

दिनांक 6 मई, 2026 को एस.एस. डी.ए.वी., सीनियर सेकेण्ड्री स्कूल (अवांखा) दीनानगर के प्रांगण में एक प्रेरणादायक विशेष कार्यक्रम का आयोजन विद्यालय के अध्यक्ष श्री अरविंद मेहता एवं सचिव श्रीमती मधुर भाषिणी की अध्यक्षता में किया गया। मुख्य अतिथि के रूप में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी हिमाचल प्रदेश के दयानन्द मठ चम्बा के कार्यक्रम से वापस लौटते समय इस कार्यक्रम में विशेष रूप से उपस्थित हुए।

कार्यक्रम का शुभारंभ ज्योति प्रज्वलन एवं गायत्री मंत्र के उच्चारण के साथ हुआ। विद्यालय प्रबंधन एवं प्रधानाचार्या ने स्वामी आर्यवेश जी का पुष्पगुच्छ भेंट कर हार्दिक स्वागत किया। इस अवसर पर एस.एस. डी. ए.वी. स्कूल तथा किड्स केयर इंटरनेशनल स्कूल के छात्री से नौवीं कक्षा तक के विद्यार्थी भी उपस्थित रहे।

अपने प्रेरणादायक संबोधन में स्वामी आर्यवेश जी ने विद्यार्थियों को सत्य, अनुशासन, परिश्रम एवं अच्छे संस्कारों का महत्व समझाया। उन्होंने विद्यार्थियों को प्रतिदिन सुबह-शाम गायत्री मंत्र का जाप करने तथा जीवन में उच्च लक्ष्य निर्धारित कर उन्हें प्राप्त करने हेतु निरंतर प्रयासरत रहने के लिए प्रेरित किया।

स्वामी जी ने महान व्यक्तित्वों के जीवन प्रसंगों का उल्लेख करते हुए कहा कि सफलता प्राप्त करने के लिए शिक्षा के साथ-साथ अच्छे



संस्कारों का होना अत्यंत आवश्यक है। उन्होंने युवाओं को नशे एवं बुरी आदतों से दूर रहने तथा समाजसेवा के कार्यों में सक्रिय भागीदारी निभाने का संदेश दिया। जापान की एक प्रेरणादायक घटना का उदाहरण देते हुए उन्होंने विद्यार्थियों में राष्ट्रप्रेम की भावना जागृत की। उन्होंने विद्यार्थियों को अपने माता-पिता, गुरुजनों एवं बड़ों का सम्मान करने, उनका आशीर्वाद लेने तथा सेवा भाव अपनाने की प्रेरणा दी।

विद्यालय के अध्यक्ष श्री अरविंद मेहता ने विद्यार्थियों से स्वामी जी द्वारा दिए गए संदेशों को अपने जीवन में अपनाकर सफलता प्राप्त करने का आह्वान किया। सचिव श्रीमती मधुरभाषिणी ने विद्यार्थियों

को स्वामी आर्यवेश जी के बताए मार्ग पर चलने का संकल्प लेने के लिए प्रेरित किया।

विद्यालय की प्रधानाचार्या रचना सैनी ने विद्यार्थियों को प्रेरित करते हुए कहा –‘उठो, जागो और तब तक मत रुको जब तक लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाए।’

किड्स केयर इंटरनेशनल स्कूल की प्रधानाचार्या प्रोमिला मन्हास ने विद्यार्थियों को समय का सदुपयोग करने एवं बड़ों का आदर करने की सीख दी। पायल शर्मा ने स्वामी आर्यवेश जी का धन्यवाद करते हुए कहा कि उनके आगमन से बच्चों को सही मार्गदर्शन एवं आगे बढ़ने की प्रेरणा प्राप्त होती है।

विद्यालय की हेड गर्ल वसुंधरा एवं वाइस हेड गर्ल कृतिका ठाकुर ने स्वामी जी के जीवन संघर्ष एवं उपलब्धियों से विद्यार्थियों को अवगत करवाया। मंच संचालन शलांगा ने प्रभावशाली ढंग से किया।

इस अवसर पर श्री धर्मेन्द्र कुमार-छपरौली, श्री अवनीश आर्य-रठौड़ा, प्रोमिला मन्हास, पायल शर्मा सहित विद्यालय समूह का समस्त स्टाफ उपस्थित रहा। कार्यक्रम विद्यार्थियों, शिक्षकों एवं उपस्थित सभी लोगों के लिए अत्यंत प्रेरणादायक एवं ज्ञानवर्धक सिद्ध हुआ।

चार आश्रम, चार वर्ण और नारी संन्यास – एक सांस्कृतिक पुनर्जागरण की पुकार

– आचार्य चंद्रशेखर शास्त्री



रात का अंतिम पहर था। खिड़की से आती चाँदनी कमरे में एक शांत उजास बिखेर रही थी। उसी उजाले में एक बालक बैठा था, किताब खुली हुई, पर मन कहीं और भटकता हुआ। कुछ देर बाद उसने धीमे स्वर में अपनी माँ से पूछा – “माँ.. दादी होती तो ये श्लोक समझा देती..

आप क्यों नहीं जानती?” माँ ने पुस्तक के पन्ने पलटे, पर शब्द जैसे उसके अपने भी नहीं थे। उसने बालक को पास खींच लिया, पर उस क्षण में एक ऐसी रिक्तता थी जिसे कोई आलिंगन भी नहीं भर पा रहा था। यह केवल एक घर का दृश्य नहीं, यह उस समय का आईना है जिसमें हम जी रहे हैं – जहाँ साधन हैं, पर संस्कार नहीं जहाँ जानकारी है, पर ज्ञान नहीं और जहाँ जीवन है, पर जीवन का अर्थ खोता जा रहा है।

मनुष्य जब बाहर बहुत दूर निकल जाता है, तब उसे भीतर लौटने की आवश्यकता महसूस होती है। शायद यही कारण है कि आज फिर भारतीय संस्कृति के मूल सिद्धांत, चार आश्रम और चार वर्ण – हमारे सामने एक समाधान की तरह खड़े हैं। मनुस्मृति का वचन है – “ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थो यतिस्तथा।” यह कोई रूढ़ व्यवस्था नहीं, बल्कि जीवन को संतुलित करने का गहन विज्ञान है, जैसे प्रकृति ऋतुओं के माध्यम से संतुलन बनाए रखती है, वैसे ही मानव जीवन इन चार अवस्थाओं से होकर संतुलित बनता है।

ब्रह्मचर्य वह अवस्था है जहाँ जीवन की मिट्टी तैयार होती है। यदि बीज अच्छा हो, तो वृक्ष अपने आप सुगंधित होता है। आज की शिक्षा हमें सूचना तो देती है, पर संयम नहीं सिखाती। भगवद्गीता का यह संदेश – “योगस्थः कुरु कर्माणि” कृमानो आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना तब था। एक गुरु ने अपने शिष्य से कहा थाकृतुम कितनी किताबें पढ़ते हो, यह महत्वपूर्ण नहीं तुम कितना बदलते हो, यह महत्वपूर्ण है।” यही ब्रह्मचर्य का सार है – ज्ञान को जीवन में उतारना।

जब वही बालक बड़ा होकर गृहस्थ बनता है, तब जीवन का विस्तार होता है। गृहस्थ आश्रम केवल जिम्मेदारियों का बोझ नहीं, बल्कि प्रेम का विस्तार है। रामायण में एक अत्यंत

मार्मिक भाव मिलता है, जब राम वन को जाते हैं, तो अयोध्या रोती है, पर राम शांत रहते हैं। लक्ष्मण पूछते हैं – “भैया, क्या आपको दुःख नहीं होता?” राम मुस्कुराकर कहते हैं “जहाँ कर्तव्य स्पष्ट हो, वहाँ मन स्थिर हो जाता है।” यह संवाद हमें याद दिलाता है कि जीवन की सबसे बड़ी शांति कर्तव्य के निर्वाह में है, न कि परिस्थितियों के अनुकूल होने में।

समय के साथ मनुष्य वानप्रस्थ की ओर बढ़ता है। यह वह समय है जब वह समझता है कि जीवन केवल कमाने के लिए नहीं था, बल्कि बाँटने के लिए था। महाभारत में भीष्म पितामह का प्रसंग अत्यंत प्रेरक है। बाणों की शय्या पर लेटे हुए भी वे ज्ञान बाँट रहे हैं। एक छोटा-सा प्रसंग हैकृएक शिष्य ने गुरु से पूछा, “गुरुदेव, सबसे बड़ा सुख क्या है?” गुरु ने उत्तर दिया “जब तुम अपने अनुभव से किसी का मार्ग आसान कर दो, वही सबसे बड़ा सुख है।” यही वानप्रस्थ है – अनुभव का दान।

संन्यास उस यात्रा का अंतिम सोपान है, जहाँ व्यक्ति स्वयं को सीमाओं से मुक्त करता है। उपनिषद का यह वचन – “त्यागेनै के अमृतत्वमानशुः” – सिर्फ शास्त्र का वाक्य नहीं, बल्कि जीवन का चरम सत्य है। एक बार किसी ने एक संन्यासी से पूछा – “आपने सब कुछ छोड़ दिया, क्या पाया?” संन्यासी हँस पड़े और बोले – “मैंने कुछ नहीं छोड़ा, मैंने तो केवल वह पाया जो कभी खो नहीं सकता।” यही संन्यास है – हानि में भी पूर्णता का अनुभव।

इसी प्रकार समाज की व्यवस्था को संतुलित करने के लिए वर्ण व्यवस्था का निर्माण हुआ। भगवद्गीता का यह स्पष्ट कथन – “चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः” – आज भी हमें यह समझाने के लिए पर्याप्त है कि यह व्यवस्था जन्म पर नहीं, बल्कि कर्म और गुण पर आधारित थी। ब्राह्मण वह है जो ज्ञान का दीप जलाए “अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा दानं प्रतिग्रहं चौव...” (मनुस्मृति)। क्षत्रिय वह है जो अन्याय के सामने खड़ा हो सकेय वैश्य वह है जो संसाधनों का संतुलन बनाएय और शूद्र वह है जो सेवा के माध्यम से समाज की जड़ों को सींचे। एक हल्का-सा हास्य प्रसंग इस सत्य को सरल बनाता है – एक व्यक्ति ने पूछा, “समाज में सबसे बड़ा कौन है?” उत्तर मिला – “जिसके बिना काम न चले, वही सबसे बड़ा है।” सोचिए, बिना सेवा, बिना ज्ञान, बिना सुरक्षा, बिना संसाधन, क्या समाज चल सकता है?

निष्काम कर्म और आन्तरिक शुचिता

- गोपाल शरण विद्यार्थी

निष्काम कर्म :- अध्ययन की दृष्टि से कर्मों का वर्गीकरण कई प्रकार से किया जा सकता है, जैसे ‘नित्य कर्म’ और ‘नियम कर्म’, ‘अकर्म’, ‘विकर्म’ और ‘कुर्म’, ‘सुकर्म’ और ‘श्रेष्ठतम कर्म’, ‘सकाम’ और ‘निष्काम’ कर्म आदि। यहाँ हम केवल सकाम और निष्काम कर्म को समझने का यत्न करेंगे। किसी भी कामना से युक्त होकर किये गये कर्म ‘सकाम’ कर्म कहाते हैं। कामना से रहित होकर किये गये कर्म ‘निष्काम’ कर्म कहाते हैं। इस प्रकार से ‘सकाम’ और ‘निष्काम’ को पारिभाषित कर देना तो आसान है, परन्तु यदि व्यवहारिक दृष्टि से देखा जाये तो सब कर्मों का मूलाधार कामना ही है। बिना कामना के कोई कर्म हो ही नहीं सकता। इसलिए ‘सकाम’ और ‘निष्काम’ कर्म के अन्तर को और बारीकी से खोजना होगा।

इसी खोज का परिणाम है हमारी यह अवधारणा कि जब कोई भी कर्म, चाहे वह कितना भी शुभ और श्रेष्ठ क्यों न हो, ‘सर्वहित’ में निजी स्वार्थ को सामने रखकर किया जाता है, वह ‘सकाम’ कर्म ही है, और वही शुभ और श्रेष्ठ कर्म जब ‘परहित’ में परमार्थ को सामने रखकर किया जाता है, तब उसकी संज्ञा ‘निष्काम कर्म’ होती है। सकाम कर्म में कर्ता की फल में रुचि रहना नितान्त स्वाभाविक है, क्योंकि इससे उसका अपना जीवन यापन प्रभावित होता है, पर ‘निष्काम कर्म’ में कर्ता की फल में किसी भी प्रकार की रुचि या आसक्ति कोई अर्थ नहीं रखती, क्योंकि फल से उसके स्वयं का कुछ बनने या बिगड़ने वाला नहीं।

मान लीजिए मैं योगाभ्यास करता हूँ अपनी पीड़ा से मुक्त होने के लिए या अपने शरीर को सुन्दर, नीरोग तथा स्वस्थ रखने के लिए, तो यह योगाभ्यास ‘सकाम कर्म’ है। पर कुछ समय पश्चात् अन्यो को लाभ पहुँचाने के उद्देश्य से अर्थात् परहित में मैं योगाभ्यास का प्रशिक्षण देने लगता हूँ, और इस प्रशिक्षण कार्य में मैं किसी निजी स्वार्थ पद, पारिश्रमिक, दक्षिणा, यश व सम्मान प्राप्ति के आकर्षण से बंधा नहीं हूँ, तो यही योगाभ्यास ‘निष्काम कर्म’ हो जाता है। मैं अपने रहने के लिए मकान बनवाता हूँ तो यह गृह निर्माण सकाम कर्म है। परन्तु निराश्रितों के लिए मैं एक रैन बसरे का निर्माण अपने साधनों से करवाता हूँ तो यह निष्काम कर्म है। मैंने संतान प्राप्ति की कामना से बड़ी श्रद्धा से ‘पुत्रेष्टि यज्ञ’ किया तो यह सकाम कर्म हुआ, मैंने विश्व शांति हेतु ‘विश्व कल्याण यज्ञ’ किया और ‘इदं न मम’ (यह मेरे लिए नहीं) की भावना से ‘स्व-आहुति’ दे दी, तो यह निष्काम कर्म हुआ। मैंने ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, वैमनस्य के वशीभूत होकर एक व्यक्ति को जान से मार दिया, यह सकाम कर्म हुआ, परन्तु युद्ध भूमि में अपने देश की खातिर,

देशवासियों की रक्षा की खातिर, मैंने शत्रु सेना के वीसों व्यक्तियों को भी जान से मार दिया तो यह निष्काम कर्म हुआ, क्योंकि यहाँ जान से मार देने में मेरा अपना कोई निजी स्वार्थ या वैमनस्य न था।

निष्काम कर्म ही क्यों?

सकाम कर्म मनुष्य को कितना भी वैभव सम्पन्न बना दे, परन्तु चिरस्थायी यश और नाम मिलता है केवल निष्काम कर्म करने से। सकाम कर्म फल अथवा परिणाम के अनुसार, सुख या दुःख देने वाले होते हैं, परन्तु ‘निष्काम कर्म’ प्रदान करते हैं केवल ‘आनन्द’ ऐसा अलौकिक, स्वर्गिक आनन्द, जो वाणी से व्यक्त नहीं किया जा सकता, केवल अनुभव ही किया जा सकता है, और जितनी ही अधिक उस आनन्द की अनुभूति होती है, उतना ही आनन्द बढ़ता ही चला जाता है, कभी कम नहीं होता। सकाम कर्म अपने फलानुसार बंधन के कारण बनते हैं, क्योंकि उनसे प्राप्त सुखों या दुःखों से मनुष्य बंध जाता है, परन्तु निष्काम कर्म बंधन का कारण नहीं होते, क्योंकि उनसे प्राप्त आनन्द काल आदि की सीमा से बंधा नहीं होता। वस्तुतः आनन्द को किसी सीमा में बांधा ही नहीं जा सकता। यही परमानन्द या मोक्षानन्द है।

आन्तरिक शुचिता-निष्काम कर्म का मूलाधार

सकाम कर्म के लिए आन्तरिक प्रेरणा तो होती है, बाह्य प्रेरणायें भी जैसे अच्छा पारिश्रमिक, अच्छी उजरत, अच्छी प्रतिष्ठा, मान-सम्मान, कार्य-सिद्ध पूर्ण सफलता या विजयश्री की प्रबल सम्भावना, आदि भी काफी शक्तिशाली सिद्ध होती है। पर निष्काम कर्म में मनुष्य तभी प्रवृत्त होता है, जब वह पूर्णतया समर्पित भाव से अन्तःप्रेरित हो। निष्काम कर्म के सम्पादन में केवल आन्तरिक प्रेरणा ही कार्य करती है और आन्तरिक प्रेरणा की जन्मदात्री है - आन्तरिक शुचिता। आन्तरिक शुचिता का सीधा सम्बन्ध है मन, चित्त, बुद्धि, अन्तःकरण और वाणी की पवित्रता से। इन पंच पवित्रताओं के पारस्परिक सहयोग से बनती है आन्तरिक शुचिता, जो मनुष्य को निष्काम कर्म के लिए प्रेरित करती है। आन्तरिक शुचिता में आन्तरिक शुद्धि का कितना महत्त्व है, देखें योग दर्शन का यह सूत्र -

सत्त्वशुद्धि सौमनस्यैकाग्रयेन्द्रियजयात्मदर्शन योग्यत्वानि च।

योगदर्शन 2/41

शौच की सिद्धि होने पर अन्तःकरण की निर्मलता, मन की प्रसन्नता, चित्त की एकाग्रता, इन्द्रियों पर विजय और आत्म दर्शन की योग्यता

आज समस्या यह नहीं कि व्यवस्थाएँ गलत हैं, समस्या यह है कि हम उनके भाव को भूल गए हैं। और इसी भूल का परिणाम है – संस्कारों का क्षय। आज का बालक गूगल से उत्तर पा लेता है, पर दादी की कहानी से मिलने वाली गर्माहट नहीं पा पाता। यही वह स्थान है, जहाँ नारी संन्यास एक नई दिशा दे सकता है। यदि महिला संन्यासिनी स्वयं को केवल त्याग की मूर्ति न मानकर “जगन्माता” के रूप में स्थापित करे, तो वह इस रिक्तता को भर सकती है।

एक अत्यंत सरल कथा है। एक गाँव में एक साध्वी आई। वह बड़े प्रवचन नहीं देती थी, पर बच्चों के साथ बैठ जाती थी। एक दिन उसने बच्चों से पूछा – “तुम्हें सबसे अच्छा क्या लगता है?” बच्चों ने कहा – “कहानी!” वह रोज उन्हें कहानी सुनाने लगी। धीरे-धीरे बच्चे बदलने लगे, उनके व्यवहार में मधुरता आई, उनके शब्दों में संस्कार आने लगे। किसी ने उससे पूछा “आपने उन्हें क्या सिखाया?” वह मुस्कुराकर बोली “मैंने उन्हें केवल कहानी सुनाई, बाकी काम उनके हृदय ने कर लिया।” यही संस्कार की शक्ति है, जो आदेश से नहीं, अनुभव से आती है।

नारी यदि संन्यास में आकर अन्नपूर्णा की तरह पोषण दे, सरस्वती की तरह ज्ञान दे, और लक्ष्मी की तरह संतुलन दे, तो वह केवल एक साध्वी नहीं रहती, वह समाज की धड़कन बन जाती है। स्वामी दयानंद सरस्वती का जीवन इसी दिशा में प्रेरित करता है। उनका यह संदेश “वेदों की ओर लौटो” सिर्फ अतीत की ओर लौटने का आह्वान नहीं, बल्कि मूल्यों की पुर्नस्थापना का संदेश है।

अंततः प्रश्न यही है, क्या हम केवल आधुनिक बनना चाहते हैं, या सार्थक भी? क्योंकि आधुनिकता साधनों से आती है, पर सार्थकता संस्कारों से। जिस दिन यह संतुलन स्थापित हो जाएगा, उस दिन फिर कोई बालक अपनी माँ से यह नहीं पूछेगा कि “दादी कहाँ हैं?” क्योंकि हर घर में, हर हृदय में, कोई न कोई “दादी” जीवित होगी। और तब यह कहा जा सकेगा— हमने केवल प्रगति नहीं की, हमने अपनी जड़ों को भी बचा लिया।

– (अंतर्राष्ट्रीय कथाकार, संपादक अध्यात्म पथ)

फ्लैट नंबर सी 1 पूर्ति अपार्टमेंट

एफ ब्लॉक विकासपुरी, नई दिल्ली 110018,

मो. 9810084806

साक्षात्कार होती है। इस सम्बन्ध में मनु महाराज का कथन अत्यन्त ग्रहणीय है -

अद्भिर्गार्वाणि शुद्ध्यन्ति मनः सत्येन शुद्ध्यति।

विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिज्ञानेन शुद्ध्यति।।

मनुस्मृति 5/109

जल से बाह्य शुद्धि, सत्याचार से मन की शुद्धि ज्ञान से बुद्धि की शुद्धि तथा विद्या तथा तप से समस्त प्राणियों की शुद्धि होती है।

प्रत्येक मनुष्य पाँच महान् शक्तियों से विभूषित है - यह है 1. शारीरिक बल, 2. इच्छा शक्ति या मनोबल, 3. विवेकशक्ति या बुद्धिबल, 4. संप्रेषण शक्ति या वाक्बल और 5. आत्म शक्ति या आत्म बल। इन शक्तियों को जानना, समझना और उनका सदुपयोग करना जरूरी है। शरीर यदि स्वस्थ और पुष्ट हो, मन निर्मल तथा शुभ संकल्पों वाला हो, बुद्धि स्थिर तथा सुमति से युक्त हो, वाणी हित, मित और मधुर हो, आत्मा ज्ञान की ज्योति से ज्योतिर्मय हो, तभी मनुष्य अनासक्त होकर समत्व योग को प्राप्त होता है। योगस्थ, आसाक्तिरहित और समभाव से युक्त होकर ही मनुष्य निष्काम भाव से कर्म करने को समर्थ होता है।

मन, बुद्धि वाणी और आत्मा की शुचिता निर्भर करती है, पवमान परमेश्वर से संयुक्त होने पर। स्थूल पदार्थों की शुद्धि सूक्ष्म किन्तु शक्तिमान तत्व से ही सम्भव है। बुद्धि, मन, चित्त वाणी तथा आत्मा सबके सब अत्यन्त सूक्ष्म तत्व हैं, अतः इनकी पवित्रता अन्तर्यामी परमात्मा की सानिध्यता से ही सम्भव है, जो सूक्ष्म से सूक्ष्म किन्तु सर्वशक्तिमान, अजर, अमर, अभय, नित्य और पवित्रकर्ता है, इसीलिए निष्काम कर्म का साधक परम पिता परमात्मा से प्रार्थना करता है -

पवमानः पुनातु मा क्रत्वे दक्षाय जीवसे। अथो अरिष्टतातये।

अथर्ववेद 6-19-2

‘पवमान परमेश्वर मुझे पवित्र करे क्रतु के लिए, दक्षता के लिए, जीवनी शक्ति के लिए और अरिष्ट, अर्थात् अहिंसा और न्याय के विस्तार के लिए।’

जैसी प्रार्थना वैसी साधना और जैसी साधना, वैसी प्रार्थना। दोनों के समन्वित पुरुषार्थ से जीवन में आती है - आन्तरिक शुचिता, जो प्रेरित और प्रशस्त करती है - निष्काम कर्मयोग का मार्ग।

- वेद प्रवक्ता, नई दिल्ली-65

“मानव-निर्माण में शिक्षा और संस्कारों का सम्बन्ध”

—पं० जगदीश चन्द्र “वसु”

मानव निर्माण करना, अथवा मानव को मानव बनाना वैदिक—धर्म का प्रधान अंग हैं। हमारे जीवन पर शिक्षा और संस्कारों का गहरा सम्बन्ध होता है जब बालक पैदा होता है तो पिछले जन्मों के कर्मानुसार उसके आत्मा में कई प्रकार के संस्कार विद्यमान रहते हैं, उत्तम शिक्षा मिलने पर उसका मन शुद्ध हो जाता हैं। यदि ऐसा न हो तो उसका चित्त और मलिन हो जाता हैं, अतः यह जरूरी हैं कि बालक की उचित शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाये। बालक की आधार शिला माता अपने गर्भ में रखती हैं। वह गर्भस्थ बच्चे कों जिस प्रकार के संस्कार दे देगी, वैसा ही वह आगे बनेगा। वहीं संस्कार उसकी मुख्य प्रकृति या प्रवृत्ति बन, उसका जीवन—पर्यन्त संचालन करती रहेगी। उदाहरण के लिये— जिस प्रकार पृथ्वी माता अपने गर्भ में जिस वस्तु को सोना, लोहा, कोयला, हीरा आदि बना देगी, उसके मूल गुण को फिर संसार का कोई भी वैज्ञानिक नहीं बदल सकता। इसी प्रकार माता अपने गर्भ में जिस बालक को— सात्विक, राजसिक, व तामसिक प्रकृति प्रदान कर देगी, फिर कोई भी आचार्य (गुरु) उसमें परिवर्तन नहीं कर सकता। हां वृद्धि कर सकता है।

गर्भवती माता जैसा खाती हैं, पीती है सोचती, देखती व सुनती है— उन सब का प्रभाव माता के गर्भस्थ बच्चे पर पड़ता हैं। वास्तव में यही समय मानव के निर्माण में महत्त्वपूर्ण समय होता है जो मां के आचरण पर ही निर्भर करता हैं।

जन्म लेने के पश्चात पांच वर्ष की आयु तक ही मां वास्तव में बालक की गुरु होती है— ये पांच वर्ष भी निर्माण की दृष्टि से बड़े ही महत्त्वपूर्ण होते हैं। बालक कैसे—बेदे, उदे, चले आचरण करें, यह सब माता पर निर्भर करता हैं। यदि माता सुशिक्षित है तो वह इन पांच वर्षों में ही बालक को सुपथ पर चला देती हैं। इस आयु में माता के अतिरिक्त बालक का निर्माण कोई नहीं कर सकता। माता के हृदय में बालक के लिये अगाध प्रेम होता हैं। बालक काला, कुरूप, अपंग, कैसा भी क्यों न हो, माता के हृदय में उसके लिये प्रेम की कोई सीमा नहीं होती। आज कल जो माता—पिता इस आयु में बालक को नौकर घर के कर्मचारियों आदि के हवाले करके स्वयं अन्य कामों में लगे रहते हैं या स्वयं सैर—सपाटे करते—फिरते हैं वे बालक का जीवन ही बिगाड़ देते हैं वैदिक—धर्म में माता का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य “सन्तान का निर्माण” ही माना हैं। ऐसा करने में ही उसका अपना और राष्ट्र दोनों का ही कल्याण होता हैं।

वैदिक—धर्म ने मानव को मानव बनाने का आधार सोलह संस्कार को करने का विधान बताया हैं— जो गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि पर्यन्त किये जाते हैं। जो मनुष्य की सम्पूर्ण आयु में फैले हुये। ये संस्कार ही मानव को मानव बनाने में सहायक होते हैं। जैसे भी संस्कार मिलते हैं, वैसे ही विचार और कर्म बन जाते हैं,— वास्तव में अच्छे—बुरे संस्कारों की उपज ही मानव का व्यक्तित्व होता हैं। संस्कार हीन व्यक्ति बेपैन्दी का लोटा हैं— जो इधर—उधर लुढ़कता रहता हैं, परन्तु एक संस्कारी व्यक्ति की दिशा व कर्म—पूर्व निश्चित होते हैं, और देश काल परिस्थिति से उत्पन्न हवा के झोके उसे पथ—भ्रष्ट नहीं कर पाते। इसीलिये हम समझते हैं कि बालक अबोध होता हैं। विचारकों का मानना हैं कि जो कुछ अच्छा या बुरा माता—पिता करते हैं, उसका प्रभाव बालक के मन—मस्तिष्क पर पड़ता है। हमें बड़ी सावधानी से बालक को शिक्षा देनी चाहिये, ताकि वह बड़ा होकर—चरित्रवान— सदाचारी, नागरिक बन सकें। अच्छा हो, यदि छोटे बालकों के सामने हम ऐसा व्यवहार न करें जिसके

फलस्वरूप उसके मन में बुरें संस्कार उत्पन्न हो? संस्कारों का प्रभाव बहुत प्रबल होता है। यदि ध्यान न दिया जाये तो एक ही कुसंस्कार हमारे पतन का कारण बन सकता हैं। आज संसार में इतनी घृणा, ईर्ष्या, और हिंसा क्यों है? इसका मूल कारण संस्कार है। मनुष्य अच्छे—बुरे मार्ग की ओर प्रवृत्त संस्कारों से ही होता हैं। महाभारत का उदाहरण हमारे सन्मुख है :—

महाभारत के युद्ध को रोकने के लिये— योगेश्वर श्री कृष्ण ने हर सम्भव प्रयत्न किये, दुर्योधन से मिले, बड़ा समझाया, परन्तु कृष्ण की एक बात भी दुर्योधन ने नहीं मानी, धर्म का उपदेश देकर जब कृष्ण दुर्योधन को समझाते हैं तो दुर्योधन कृष्ण को सम्बोधित करते हुये कहता है कि—

जानामि धर्म न च मे प्रवृत्ति।

जानाम्य धर्म न च मे निवृत्ति।।

के नाऽपि देवेन हृदि संस्थितेन।

यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि।।

महाराज ! मैं धर्म को अच्छी तरह से जानता हूँ कि धर्म क्या है परन्तु मेरी धर्म में प्रवृत्ति नहीं है और अधर्म को भी मैं अच्छी तरह से समझता हूँ कि? अधर्म क्या है, जिस पर चलने से मनुष्य का सर्वनाश हो जाता है। परन्तु उससे मेरी निवृत्ति नहीं है— क्योंकि मेरे हृदय में ऐसे संस्कार हैं— “यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि” जिधर वह संस्कार मुझे नियुक्त करते (प्रेरित करते है) उधर मुझे झुकना पड़ता है, मैं क्या करूँ, इसमें मेरा दोष नहीं यह सब संस्कारों की बात है। इसलिये मनुष्य जीवन में जो कुछ भला—बुरा करता हैं. अथवा प्रेरित होता हैं। वह सब संस्कारों के कारण ही होता है इसलिये मनुष्य को संस्कारों के महत्त्व को समझते हुयें, अपने अमूल्य मानव जीवन को कल्याण कारी मार्ग पर ले जाता हुआ इहलौकिक तथा पारलौकिक सुख को प्राप्त करे।

हमारे ऋषि—महर्षियों तथा मनीषियों ने संस्कारों के प्रति सचेत रहने को कहा हैं। मानव हर वक्त देखे कि— वह क्या सोच रहा हैं? जैसे हमारी सोच—विचार होगी, वैसा ही हमारा भाग्य का निर्माण होगा, हमें प्रयत्न करना है कि— हमारे संस्कार अच्छे—उत्तम हों, ताकि हमारा भविष्य उज्ज्वल हों। इतिहास बताता है कि अनेकों महापुरुष अपने माता—पिता गुरुजनों की कृपा से ही जीवन में सफल हुये हैं।

भारत के वर्तमान राष्ट्रपति महामहिम डॉ० ए०पी०जे० अब्दुल कलाम जी ने अपने जीवन के सम्बन्ध में कहा हैं कि “हर बालक एक विशेष, आर्थिक, सामाजिक, और भावनात्मक परिवेश में कुछ वंशानुगत गुणों के साथ जन्म लेता है। फिर संस्कारों के अनुरूप उसे ढाला जाता है। मुझे अपने पिता जी से विरासत के रूप में ईमानदारी और आत्मानुशासन मिला तथा माता से ईश्वर में विश्वास और करुणा का भाव, यहीं गुण मेरे तीनों भाई—बहनों को भी विरासत में मिले, बचपन में मेरे तीन पक्के दोस्त थे— रामानन्द शास्त्री, अरविन्दन और शिव प्रकाशन ये तीनों ही ब्राह्मण परिवारों से थे। रामानन्द शास्त्री तो रामेश्वरम् मन्दिर के सबसे बड़े पुजारी लक्ष्मण शास्त्री का बेटा था। अलग—अलग धर्म, पालन—पोषण, पढ़ाई—लिखाई को लेकर हममें से किसी भी बालक ने कभी भी आपस में कोई भेदभाव महसूस नहीं किया। जब मैं रामेश्वरम् के प्राईमरी स्कूल में पांचवीं कक्षा में था, तब एक दिन एक नये शिक्षक हमारी कक्षा में आये, मैं टोपी पहना करता था, कक्षा में मैं हमेशा आगे की पंक्ति में जनेऊ पहने रामानन्द शास्त्री के साथ बैठा करता था।

जिला आर्य सभा एवं आर्य समाज, आरा द्वारा संचालित विभिन्न सेवा प्रकल्प भव्यता के साथ सम्पन्न

जिला आर्य सभा एवं आर्य समाज, आरा द्वारा संचालित विभिन्न सेवा प्रकल्पों की श्रृंखला में आयोजित त्रिदिवसीय “षट्कर्म योग स्वास्थ्य रक्षा एवं प्रशिक्षण शिविर” का आयोजन श्रद्धानंद भवन, आर्य समाज मंदिर, आर्य पथ, नगर थाना, एम.पी. बाग, आरा में दिनांक 4 मई 2026, सोमवार से 6 मई 2026, बुधवार तक किया गया।

इस कार्यक्रम की अध्यक्षता आर्य समाज के कार्यकारी प्रधान महावीर विद्यासागर जी के संरक्षण एवं मार्गदर्शन में संपन्न हुई। शिविर में योग विद्यालय, मुंगेर से पधारे योग गुरु आशुतोष दास जी द्वारा षट्कर्म योग का प्रशिक्षण कराया गया। उन्होंने बताया कि षट्कर्म योग के माध्यम से विभिन्न प्रकार की बीमारियों से बचाव संभव है।

शिविर में षट्कर्म योग की विभिन्न प्रक्रियाओं का अभ्यास कराया गया। षट्कर्म कृ धोति, बस्ति, नेति, त्राटक, नौली तथा कपालभाति कृ शरीर की आंतरिक शुद्धि की छह प्रमुख योगिक क्रियाएँ हैं, जो त्रिदोष (वात, पित्त एवं कफ) को संतुलित करती हैं। इन क्रियाओं को प्रातःकाल खाली पेट अनुभवी गुरु के निर्देशन में करना चाहिए। ये प्रक्रियाएँ शरीर के



ईमानदारी से कार्य करना सच्ची राष्ट्रभक्ति है

हमारे समाज में अनेक ऐसे उदाहरण देखने को मिलते हैं जहाँ लोग मानवता का परिचय देते हैं। प्राकृतिक आपदाओं, दुर्घटनाओं या कठिन परिस्थितियों में लोग बिना किसी स्वार्थ के दूसरों की सहायता करते हैं। डॉक्टर, सैनिक, समाजसेवी और शिक्षक अपने कर्तव्यों के माध्यम से मानवता की सेवा करते हैं। गरीबों को भोजन देना, घायल व्यक्ति की मदद करना, बुजुर्गों का सम्मान करना तथा जरूरतमंदों की सहायता करना मानवता के ही रूप हैं।

मानवता हमें यह सिखाती है कि सभी मनुष्य समान हैं। जाति, धर्म, भाषा और रंग के आधार पर भेदभाव करना मानवता के विरुद्ध है। यदि प्रत्येक व्यक्ति मानवता के मार्ग पर चले, तो समाज में प्रेम, शांति और भाईचारा स्थापित हो

नये शिक्षक को एक हिन्दू लड़के का मुसलमान लड़के के साथ बैठना अच्छा नहीं लगा। उन्होंने मुझे उठाकर पीछे वाली बेंच पर चले जाने को कहा, मुझे बहुत बुरा लगा, रामानन्द शास्त्री को भी यह बहुत खला। स्कूल की छुट्टी होने पर हम घर गये, और सारी घटना अपने घर वालों को बताई। यह सुनकर लक्ष्मण शास्त्री ने उस शिक्षक को बुलाया और कहा कि उसे निर्दोष बालकों के दिमाग में इस तरह सामाजिक असमानता एवं साम्प्रदायिकता का विष नहीं घोलना चाहिये। हम सब भी वहां मौजूद थे। लक्ष्मण शास्त्री ने उस शिक्षक से साफ—साफ कह दिया कि— या तो वह क्षमा मांगे या फिर स्कूल छोड़कर यहां से चला जाये। उस शिक्षक ने अपने किये व्यवहार पर न सिर्फ दुःख व्यक्त किया—बल्कि लक्ष्मण शास्त्री के कड़े रुख एवं धर्म निरपेक्षता में उनके विश्वास से उस नौजवान शिक्षक में अन्ततः बदलाव आ गया”। यह घटना हैं जो हमें उत्तम संस्कारों की ओर प्रेरित करती हैं। यह किसको पता था कि यह होनहार बालक अब्दुल कलाम एक दिन महान वैज्ञानिक एवं भारत का राष्ट्रपति बनेगा। ऐसे ही उत्तम संस्कार डॉ० राजेन्द्र प्रसाद बाबू, सर्वपल्ली राधा कृष्णन्, शंकर दयाल शर्मा, लाल बहादुर शास्त्री, सुभाषचन्द्र बोस, पं० जवाहर लाल नेहरू स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हंसराज आदि अनेकों इस आर्यावर्त देश में दिव्य आत्मायें हुई जिन्होंने उत्तम संस्कारों के द्वारा राष्ट्र निर्माण में महान योगदान दिया।

हमें भी उनके विचारों को अपना कर आगे बढ़ना हैं और वैयक्तिक, परिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीयता को ऊँचा उठाना हैं। यह शिक्षा एवं संस्कारों के द्वारा ही सम्भव हैं। महापुरुषों का जीवन ही हमारा मार्ग दर्शन कर सकता हैं। हमारे मन का अन्धकार उनकी ज्ञानरूपी ज्योति से दूर हो सकता हैं। शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन जरूरी हैं। हमें नैतिक मूल्यों पर बल देना होगा। भारत के समस्त विद्यालयों में नैतिक—धर्मशिक्षा मुख्य विषय के रूप में अवश्य ही होना चाहिये, सभी मत—मतान्तरों के मूल सिद्धान्त एक जैसे ही हैं। उन पर पहले शिक्षक को चलना हैं। शिक्षक जो करता है विद्यार्थी भी वैसा ही करता हैं। अपने बालकों को सिनेमा और टी०वी० के उन कार्यक्रमों से दूर रखना चाहिये— जिनको देखने से उनके चरित्र बिगड़ सकते हैं। “धर्मो रक्षति रक्षितः” यह सत्य है कि इस धर्म पारायण देश में अनादि काल से संस्कारों की महत्ता उजागर की गई हैं। हमारे ऋषि महर्षि आदि ग्रन्थ वेदों के द्वारा सदैव ही यह उपदेश देते रहे है कि जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त जितने संस्कार—कर्तव्य हैं उन्हें अपने जीवन का आधार बनाना चाहिये। हमारे पूर्व आचार्यों ने मल विक्षेप और आवरण से छुटकारा पाने के कई साधन बताये है— पर उनका आधार—भूत सर्वोत्तम उपाय यही है कि हमारी शिक्षा—दीक्षा ठीक प्रकार से हो, और हमारा घर परिवार उत्तम संस्कारों से सम्पन्न हो। संस्कारों का अनुपालन मानव—जीवन के अभीष्ट लक्ष्य की प्राप्ति में परम सहायक होते हैं। अधिक जानकारी के लिये हमें १९वीं शताब्दि के महान क्रान्ति—कारी, वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द कृत “संस्कार—विधि” को आद्योपान्त अध्ययन करना चाहिये मानव—निर्माण में इन सोलह संस्कारों का बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है। आर्यों ! हम मानव निर्माण कर आध्यात्मिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय उन्नति में सहायक बनें।

— वेद प्रचार अधिष्ठाता-पानीपत

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, हरियाणा/दिल्ली

विभिन्न अंगों कृ पाचन तंत्र, श्वसन तंत्र एवं मस्तिष्क कृ से विषैले एवं अवांछित पदार्थों को बाहर निकालने में सहायक होती हैं।

शिविर में निम्नलिखित क्रियाओं का अभ्यास कराया गया —
धोति — पेट की सफाई, **बस्ति** — आँतों की सफाई, **त्राटक** —

एकाग्रता एवं नेत्र स्वास्थ्य के लिए, **नौली** — पेट की मालिश एवं पाचन शक्ति वृद्धि, **कपालभाति** — श्वास शुद्धि एवं फेफड़ों की मजबूती।

इस अवसर पर आर्य समाज के मंत्री प्रकाश रंजन, कोषाध्यक्ष नीरज कुमार, महिला पतंजलि जिला प्रभारी कृष्णा देवी, महिला पतंजलि मीडिया प्रभारी रितु गुप्ता एवं जतिंदर कौर सहित आर्य समाज एवं महिला पतंजलि के सभी सदस्यों की सक्रिय सहभागिता रही। सभी के सहयोग से त्रिदिवसीय कार्यक्रम सफलतापूर्वक संपन्न हुआ।

कार्यक्रम की जानकारी देते हुए मंत्री प्रकाश रंजन ने कहा कि योग वैश्विक स्वास्थ्य समस्याओं के समाधान का प्रभावी माध्यम है। इसे जन—जन तक पहुँचाने के लिए आर्य समाज द्वारा प्रखंड एवं पंचायत स्तर तक जागरूकता अभियान चलाए जाएंगे।

— घनश्याम मुरारी

सकता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती, महात्मा गांधी, मदर टेरेसा जैसे महान व्यक्तियों ने अपने जीवन से मानवता का संदेश दिया है।

आज के समय में स्वार्थ, लालच और प्रतिस्पर्धा के कारण लोग एक—दूसरे से दूर होते जा रहे हैं। ऐसे में मानवता की भावना को बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है। हमें अपने व्यवहार में दया, सहानुभूति, परोपकार, ईमानदारी और सहयोग की भावना विकसित करनी चाहिए। सच्चा मनुष्य वही है जो दूसरों के काम आए और समाज एवं राष्ट्र के कल्याण की भावना से कार्य करे। सच्ची मानवता ही संसार को सुंदर, सुखद एवं सुदृढ़ बनाती है।



मानवता वह श्रेष्ठ गुण है जो मनुष्य को केवल एक जीव नहीं, बल्कि संवेदनशील और दयालु इंसान बनाता है। मानवता का अर्थ है — दूसरों के प्रति प्रेम, करुणा, सहानुभूति और सहायता की भावना रखना। जिस व्यक्ति के हृदय में मानवता होती है, वह दूसरों के दुख को अपना दुख समझता है और हर संभव सहायता करने का प्रयास करता है। आज के आधुनिक युग में विज्ञान और तकनीक ने बहुत प्रगति कर ली है, लेकिन यदि मानवता का अभाव हो जाए तो यह प्रगति निरर्थक हो जाती है।

सोशल मीडिया के
माध्यम से
स्वामी आर्यवेश जी
से जुड़ें



आर्य समाज के त्यागी, तपस्वी एवं तेजस्वी संन्यासी, सार्वदेशिक सभा के
प्रधान स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ने के लिए इस लिंक पर क्लिक करें :-
www.facebook.com/SwamiAryavesh व
फेसबुक पेज को लाइक करें तथा अन्य मित्रों को भी प्रेरित करें।
ई-मेल : aryavesh@gmail.com
दूरभाष : 011-23274771, 42415359

प्रतिष्ठा में :-

अवितरण की दशा में लौटारें -
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
"दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002

संस्कृता: स्त्री पराशक्ति:

"ओ३म्"

संस्कारवान स्त्री परमशक्ति है।

कन्याओं एवं युवतियों के लिए स्वर्णिम अवसर कन्या चरित्र निर्माण एवं योग शिविर

दिनांक: 6 जून, शनिवार, 2026 से 12 जून शुक्रवार 2026 तक

स्थान: स्वामी इंद्रवेश विद्यापीठ, गाँव टिटौली, जिला रोहतक (हरियाणा)

पाँच सौ कन्याएँ एवं युवतियाँ भाग लेंगी

शिविर
के मुख्य
आकर्षण

- राष्ट्रीय भावना, अनुशासन, नैतिक शिक्षा तथा परोपकार की शिक्षा दी जाएगी।
- योगासन, प्राणायाम, जूडो कराटे आदि शारीरिक एवं आत्मरक्षा सम्बन्धी प्रशिक्षण दिया जाएगा।
- वैदिक विद्वानों द्वारा संध्या, यज्ञ, आर्य संस्कृति व वैदिक सिद्धान्तों पर व्याख्यान तथा शंका समाधान किया जाएगा।
- चर्चित महिलाओं द्वारा जीवन में सफलता के गुर सिखाए जाएंगे।
- व्यक्तित्व विकास, वक्तृत्व कला एवं आत्म विश्वास के विकास का प्रशिक्षण दिया जाएगा।
- भोजन की व्यवस्था पूर्णतः निःशुल्क रहेगी।

आवश्यक नियम व निर्देश

- अनुशासन का पालन आवश्यक होगा।
- कोई भी कीमती सामान अपने साथ न लेकर आएँ।
- ऋतु अनुकूल बिस्तर, टॉर्च, सफेद सूट व नित्य प्रयोग होने वाला सामान साथ लाएँ।
- इच्छुक छात्राएं 200 रुपये प्रवेश शुल्क सहित अपना प्रवेश-पत्र अपने माता-पिता/अभिभावक द्वारा अनुमोदित कराकर 30 मई तक अवश्य जमा करवाएँ। सीटें सीमित होने के कारण विलम्ब से आने वाले आवेदन स्वीकृत नहीं होंगे।

दानी महानुभावों से अपील

इस सात दिवसीय विशाल शिविर के प्रबन्ध एवं भोजन प्रातः राशन आदि पर लाखों रुपये खर्च होने हैं। आप जैसे दानी महानुभावों के सहयोग से ही इस व्यय की पूर्ति होनी है। अतः आपसे प्रार्थना है कि राष्ट्र निर्माण के इस यज्ञ को सफल बनाने के लिए आप अधिक से अधिक आर्थिक सहयोग कराएँ। आप यदि धनराशि के रूप में योगदान देना चाहते हैं तो समस्त क्रास चौक/युवा निर्माण अभियान अथवा स्वामी इंद्रवेश फाउण्डेशन के नाम से भिजवाने की कृपा करें। यदि वस्तु रूप में दान देना चाहें तो आप आटा, दाल, चावल, शुद्ध घी, रिफाइन्ड, दलिया, चीनी, दूध, सब्जी, मसाले आदि सामान भिजवा कर सहयोग कर सकते हैं। आपके द्वारा दिए गए दान से कन्या चरित्र निर्माण रूपी पवित्र यज्ञ सफल होगा तथा आप पुण्य के भागी बनेंगे।

UPI/AC- 2978000100105126 (युवा निर्माण अभियान) AC- 2978000100105117 (स्वामी इंद्रवेश फाउण्डेशन)
IFSC Code- PUNB0297800

आयोजक:

युवा निर्माण अभियान, सार्वदेशिक आर्या युवती परिषद्
धर्म प्रतिष्ठान एवं स्वामी इंद्रवेश फाउंडेशन

कार्यालय: - स्वामी इंद्रवेश विद्यापीठ टिटौली, रोहतक (हरियाणा)

सम्पर्क नं. - 9416630916, 9354840454, 7206852527, 9253726236

प्रो० विठ्ठलराव आर्य, सभा मंत्री, प्रकाशक व सम्पादक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, 3/5 महर्षि दयानन्द भवन, (रामलीला मैदान/आसफ अली रोड), नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित तथा मुद्रक - थॉमस पुलटू एवं मुद्रणालय - ज्योति प्रिंटिंग प्रेस, ई-94, सैक्टर-6, नोएडा-201301 से मुद्रित। (दूरभाष : 011-23274771, 42415359)

सम्पादक : प्रो० विठ्ठलराव आर्य (सभा मंत्री) मो.:0-9849560691, 0-9013251500 ई-मेल : sarvadeshik@yahoo.co.in, sarvadeshikarya@gmail.com वेबसाइट : www.vedicaryasamaj.com

वैदिक सार्वदेशिक साप्ताहिक में छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक या सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की सैद्धान्तिक मतेक्यता होना अनिवार्य नहीं है।